M

विषय तीन

बंधुत्व, जाति तथा वर्ग
आरंभिक समाज
(लगभग 600 ई.पू. से 600 ईसवी)

12095CH03

पिछले अध्याय में हमने पढ़ा कि लगभग 600 ई.पू. से 600 ईसवी तक के मध्य आर्थिक और राजनीतिक जीवन में अनेक परिवर्तन हुए। इनमें से कुछ परिवर्तनों ने समकालीन समाज पर अपना प्रभाव छोड़ा। उदाहरणत: वन क्षेत्रों में कृषि का विस्तार हुआ जिससे वहाँ रहने वाले लोगों की जीवनशैली में परिवर्तन हुआ; शिल्प विशेषज्ञों के एक विशिष्ट सामाजिक समूह का उदय हुआ; तथा संपत्ति के असमान वितरण ने सामाजिक विषमताओं को अधिक प्रखर बनाया।

इतिहासकार इन सब प्रक्रियाओं को समझने के लिए प्राय: साहित्यिक परंपराओं का उपयोग करते हैं। कुछ ग्रंथ सामाजिक व्यवहार के मानदंड तय करते थे। अन्य ग्रंथ समाज का चित्रण करते थे और कभी-कभी समाज में मौजूद विभिन्न रिवाज़ों पर अपनी टिप्पणी भी प्रस्तुत करते थे। अभिलेखों से हमें समाज के कुछ ऐतिहासिक अभिनायकों की झलक मिलती है। हम देखेंगे कि प्रत्येक ग्रंथ (और अभिलेख) किसी समुदाय विशेष के दृष्टिकोण से लिखा जाता था। अत: यह याद रखना ज़रूरी हो जाता है कि ये ग्रंथ *किसने* लिखे, *क्या* लिखा गया और *किनके* लिए इनकी रचना हुई। इस बात पर भी ध्यान देना ज़रूरी है कि इन ग्रंथों की रचना में किस भाषा का प्रयोग हुआ तथा इनका प्रचार-प्रसार किस तरह हुआ। यदि हम इन ग्रंथों का प्रयोग सावधानी से करें तो समाज में प्रचलित आचार-व्यवहार और रिवाज़ों का इतिहास लिखा जा सकता है।

चित्र 3.1
महाभारत का एक दृश्य, *मृण्मयी मूर्तिकला (पश्चिम बंगाल) (लगभग सत्रहवीं शताब्दी)*

उपमहाद्वीप के सबसे समृद्ध ग्रंथों में से एक महाभारत का विश्लेषण करते हुए हम अपना ध्यान एक ऐसे विशाल महाकाव्य पर केंद्रित कर रहे हैं जो अपने वर्तमान रूप में एक लाख श्लोकों से अधिक है और विभिन्न सामाजिक श्रेणियों व परिस्थितियों का लेखा-जोखा है। इस ग्रंथ की रचना एक हज़ार वर्ष तक होती रही (लगभग 500 ई.पू. से)। इसमें निहित कुछ कथाएँ तो इस काल से पहले भी प्रचलित थीं। महाभारत की मुख्य कथा दो परिवारों के बीच हुए युद्ध का चित्रण है। इस ग्रंथ के कुछ भाग विभिन्न सामाजिक समुदायों के आचार-व्यवहार के मानदंड तय करते हैं। यदा-कदा (किंतु हमेशा नहीं) इस ग्रंथ के मुख्य पात्र इन सामाजिक मानदंडों का अनुसरण करते हुए दिखाई पड़ते हैं। मानदंडों का अनुसरण व उनकी अवहेलना क्या इंगित करती है?

भापर्व [2. 19. 19

मागधानां सुरुचिरं चैत्यकान्तं समाद्रवन् ।
शिरसीव जिघांसन्तो जरासंधजिघांसवः ॥ १७
स्थिरं सुविपुलं शृङ्गं सुमहान्तं पुरातनम् ।
अर्चितं माल्यदामैश्च सततं सुप्रतिष्ठितम् ॥ १८
विपुलैर्बाहुभिर्वीरास्तेऽभिहत्याभ्यपातयन् ।
ततस्ते मागधं दृष्ट्वा पुरं प्रविविशुस्तदा ॥ १९

C. 2. 817
B. 2. 21 2
K. 2. 21 2

श्रुत्वा नादं महाघोरं गिरिव्रजनिवासिनः ।
— (L. 2) $D_{3.4}$ नानाविधास्; T_1 आद्यायुधौ (for नानायुधास्).]

17 G_3 om. 17 (cf. v.l. 16). Dn Cn read 17^{ab} (for the first time) after 14, *repeating* it here. — ^{a}) B_1 च सुचिरं; Dn (first time) तु (for सु-). — ^{b}) K_3 $\tilde{N}_1$ V_1 $B_{2.3.5}$ D_{3-6} चैत्यकं तं (K_3 च); B_1 चैत्रकांतं; B_6 D_2 $G_{1.4-6}$ M चैत्यं कांतं; Dn (second time) चैत्यकं ते; D_1 चैत्यं केतुं; G_2 चैत्यकाभ्रं (for चैत्यकान्तं). Cn cites चैत्यकं both times; Cd cites चैत्यं; Cv perhaps चैत्यकं ते. See Addenda. $Ś_1$ अपाद्रवन्; S (G_3 om.) महाद्रुमं (for समाद्रवन्). K_2 चैत्यैरुच्चसमाद्रवत् (sic); B_4 चैत्रकं समुपाद्रवन्; Dn (first time) चैत्यकांतरमाद्रवन्. — ^{c}) $Ś_1$ K_4 शिरांसीव; $D_{1.2}$ शरसीव; G_6 जरसीव; Cv as in text. $Ś_1$ K $B_{1.4.5}$ D (except $D_{1.2}$) समाघ्नंतो; G_2 तदा जघ्नुर्; Cv as in text. — ^{d}) B D (except D_4) $G_{1.2}$ M जरासंधं जि°; Cv as in text.

18 G_3 om. 18 (cf. v.l. 16). — ^{a}) G_2 स्थितं (for स्थिरं). G_2 लिंगं (for शृङ्गं). $G_{1.6}$ सुस्थिरं विपुलं शृंगं. — ^{b}) $Ś_1$ $\tilde{N}_1$ V_1 B D G_2 सुमहत्तत्पुरा°. — ^{c}) $B_{4.5}$ अंचितं (for अर्चितं). $Ś_1$ K_4 माल्यगंधैश्च; B_{3-5} Dn D_{3-6} गंधमाल्यैश्च; G_2 गंधपुष्पाद्यैः; Cv as in text. — ^{d}) V_1 सुकृतं (for सततं).

19 ^{a}) $D_{1.2}$ बहुभिर्. D_4 वारास्; D_6 चारास् (for वीरास्). — ^{b}) V_1 $B_{2.3.6}$ D_2 T_1 G_4 निहत्य; Cv as in text. $Ś_1$ K_4 न्यपातयन्; V_1 B_3 [अ]भिदार°; B_2 $D_{1.2}$ [अ]भिपात°; M_2 [अ]भ्यपालयन्; Cv as in text. G_2 ते बलादभ्यताडयन्. — ^{c}) $B_{3.4}$ विविशुर्; G_1 मागधान् (for मागधं). $\tilde{N}_1$ वीराः; V_1 B Dn_2 D_{2-6} हृष्टाः; S (except $G_{1.2}$ M_2) द्रष्टुं (for दृष्ट्वा). — ^{d}) T_1 G_{3-6} M हृष्टाः; G_1 हृष्ट्वा (for पुरं). K B_6 $D_{1.2}$ तद्विविशुस्; V_1 $B_{3.4}$ दैववशात् (for प्रविविशुस्). B_3 च ह (for तदा). G_2 प्रहृष्टा राजमार्गतः. — S ins. (Cv glosses) after 19: Dn (!) D_4 (transposing the pādas!) ins. after 20^{a} (see variants below):

105]

चित्र 3.2

समालोचनात्मक संस्करण के एक पृष्ठ का अंश

बड़े मोटे अक्षरों में प्रकाशित अंश मुख्य पाठ का हिस्सा है। छोटा मुद्रण विभिन्न पांडुलिपियों में पाए गए पाठभेदों को दर्शाता है जिन्हें ध्यानपूर्वक तालिकाबद्ध किया गया था।

1. महाभारत का समालोचनात्मक संस्करण

1919 में प्रसिद्ध संस्कृत विद्वान वी.एस. सुकथांकर के नेतृत्व में एक अत्यंत महत्त्वाकांक्षी परियोजना की शुरुआत हुई। अनेक विद्वानों ने मिलकर महाभारत का समालोचनात्मक संस्करण तैयार करने का ज़िम्मा उठाया। इससे जुड़े क्या-क्या कार्य थे? आरंभ में देश के विभिन्न भागों से विभिन्न लिपियों में लिखी गई महाभारत की संस्कृत पांडुलिपियों को एकत्रित किया गया।

परियोजना पर काम करने वाले विद्वानों ने सभी पांडुलिपियों में पाए जाने वाले श्लोकों की तुलना करने का एक तरीका ढूँढ़ निकाला। अंततः उन्होंने उन श्लोकों का चयन किया जो लगभग सभी पांडुलिपियों में पाए गए थे और उनका प्रकाशन 13,000 पृष्ठों में फैले अनेक ग्रंथ खंडों में किया। इस परियोजना को पूरा करने में सैंतालीस वर्ष लगे। इस पूरी प्रक्रिया में दो बातें विशेष रूप से उभर कर आईं : पहली, संस्कृत के कई पाठों के अनेक अंशों में समानता थी। यह इस बात से ही स्पष्ट होता है कि समूचे उपमहाद्वीप में उत्तर में कश्मीर और नेपाल से लेकर दक्षिण में केरल और तमिलनाडु तक सभी पांडुलिपियों में यह समानता देखने में आई। दूसरी बात जो स्पष्ट हुई, वह यह थी कि कुछ शताब्दियों के दौरान हुए महाभारत के प्रेषण में अनेक क्षेत्रीय प्रभेद भी उभर कर सामने आए। इन प्रभेदों का संकलन मुख्य पाठ की पादटिप्पणियों और परिशिष्टों के रूप में किया गया। 13,000 पृष्ठों में से आधे से भी अधिक इन प्रभेदों का ब्योरा देते हैं।

एक तरह से देखा जाए तो ये प्रभेद उन गूढ़ प्रक्रियाओं के द्योतक हैं जिन्होंने प्रभावशाली परंपराओं और लचीले स्थानीय विचार और आचरण के बीच संवाद कायम करके सामाजिक इतिहासों को रूप दिया था। यह संवाद द्वंद्व और मतैक्य दोनों को ही चित्रित करते हैं।

इन सभी प्रक्रियाओं के बारे में हमारी समझ मुख्यतः उन ग्रंथों पर आधारित है जो संस्कृत में ब्राह्मणों द्वारा उन्हीं के लिए लिखे गए। उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में इतिहासकारों ने पहली बार सामाजिक इतिहास के मुद्दों का अनुशीलन करते समय इन ग्रंथों को सतही तौर पर समझा–उनका विश्वास था कि इन ग्रंथों में जो कुछ भी लिखा गया है वास्तव में उसी तरह से उसे व्यवहार में लाया जाता होगा। कालांतर में विद्वानों ने पालि, प्राकृत और तमिल ग्रंथों के माध्यम से अन्य परंपराओं का अध्ययन किया। इन अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ कि आदर्शमूलक संस्कृत ग्रंथ आमतौर से आधिकारिक माने जाते थे, किंतु इन आदर्शों को प्रश्नवाचक दृष्टि से भी देखा जाता था और यदा-कदा इनकी अवहेलना भी की जाती थी। जब हम इतिहासकारों द्वारा सामाजिक इतिहासों के पुनर्निर्माण की व्याख्या करते हैं तब हमें इस बात को ध्यान में रखना होगा।

2. बंधुता एवं विवाह
अनेक नियम और व्यवहार की विभिन्नता

2.1 परिवारों के बारे में जानकारी

हम बहुधा पारिवारिक जीवन को सहज ही स्वीकार कर लेते हैं। किंतु आपने देखा होगा कि सभी परिवार एक जैसे नहीं होते : पारिवारिक जनों की गिनती, एक दूसरे से उनका रिश्ता और उनके क्रियाकलापों में भी भिन्नता होती है। कई बार एक ही परिवार के लोग भोजन और अन्य संसाधनों का आपस में मिल-बाँटकर इस्तेमाल करते हैं, एक साथ रहते और काम करते हैं और अनुष्ठानों को साथ ही संपादित करते हैं। परिवार एक बड़े समूह का हिस्सा होते हैं जिन्हें हम संबंधी कहते हैं। तकनीकी भाषा का इस्तेमाल करें तो हम संबंधियों को *जाति समूह* कह सकते हैं। पारिवारिक रिश्ते 'नैसर्गिक' और रक्त संबद्ध माने जाते हैं किंतु इन संबंधों की परिभाषा अलग-अलग तरीके से की जाती है। कुछ समाजों में भाई-बहन (चचेरे, मौसेरे आदि) से खून का रिश्ता माना जाता है किंतु अन्य समाज ऐसा नहीं मानते।

आरंभिक समाजों के संदर्भ में इतिहासकारों को विशिष्ट परिवारों के बारे में जानकारी आसानी से मिल जाती है किंतु सामान्य लोगों के पारिवारिक संबंधों को पुनर्निर्मित करना मुश्किल हो जाता है। इतिहासकार परिवार और बंधुता संबंधी *विचारों* का भी विश्लेषण करते हैं। इनका अध्ययन इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे लोगों की सोच का पता चलता है। संभवत: इन विचारों ने लोगों के क्रियाकलापों को प्रभावित किया होगा। इसी तरह व्यवहार ने विचारों पर भी असर डाला होगा।

परिवार और बंधुता के लिए प्रयुक्त शब्द

संस्कृत ग्रंथों में 'कुल' शब्द का प्रयोग परिवार के लिए और 'जाति' का बांधवों के बड़े समूह के लिए होता है। पीढ़ी-दर-पीढ़ी किसी भी कुल के पूर्वज इकट्ठे रूप में एक ही वंश के माने जाते हैं।

2.2 पितृवंशिक व्यवस्था के आदर्श

क्या हम उन बिंदुओं को निर्दिष्ट कर सकते हैं जब बंधुता के रिश्तों में परिवर्तन आया? एक स्तर पर महाभारत इसी की कहानी है। यह बांधवों के दो दलों-कौरव और पांडव-के बीच भूमि और सत्ता को लेकर हुए संघर्ष का चित्रण करती है। दोनों ही दल कुरु वंश से संबंधित थे जिनका एक जनपद (अध्याय 2 मानचित्र 1) पर शासन था। यह संघर्ष एक युद्ध में परिणत हुआ जिसमें पांडव विजयी हुए। इनके उपरांत पितृवंशिक उत्तराधिकार को उद्घोषित किया गया। हालाँकि पितृवंशिकता महाकाव्य की रचना से पहले भी मौजूद थी, महाभारत की मुख्य कथावस्तु ने इस आदर्श को और सुदृढ़ किया। पितृवंशिकता में पुत्र पिता की मृत्यु के बाद उनके संसाधनों पर (राजाओं के संदर्भ में सिंहासन भी) अधिकार जमा सकते थे।

पितृवंशिकता का अर्थ है वह वंश परंपरा जो पिता के पुत्र फिर पौत्र, प्रपौत्र आदि से चलती है।

मातृवंशिकता शब्द का इस्तेमाल हम तब करते हैं जहाँ वंश परंपरा माँ से जुड़ी होती है।

अधिकतर राजवंश (लगभग छठी शताब्दी ई.पू. से) पितृवंशिकता प्रणाली का अनुसरण करते थे। हालाँकि इस प्रथा में विभिन्नता थी :

कभी पुत्र के न होने पर एक भाई दूसरे का उत्तराधिकारी हो जाता था तो कभी बंधु-बांधव सिंहासन पर अपना अधिकार जमाते थे। कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में स्त्रियाँ जैसे प्रभावती गुप्त (अध्याय 2) सत्ता का उपभोग करती थीं।

पितृवंशिकता के प्रति झुकाव शासक परिवारों के लिए कोई अनूठी बात नहीं थी। ऋग्वेद जैसे कर्मकांडीय ग्रंथ के मंत्रों से भी यह बात स्पष्ट होती है। यह संभव है कि धनी वर्ग के पुरुष और ब्राह्मण भी ऐसा ही दृष्टिकोण रखते थे।

स्रोत 1

‘उत्तम पुत्रों’ का प्रजनन

यहाँ ऋग्वेद से एक मंत्र का अंश उद्धृत है जो इस ग्रंथ में संभवतः लगभग 1000 ई.पू. में जोड़ा गया था। विवाह संस्कार के दौरान यह मंत्र पुरोहित द्वारा पढ़ा जाता था। आज भी अनेक हिंदू विवाह संस्कारों में इसका प्रयोग होता है :

मैं इसे यहाँ से मुक्त करता हूँ किंतु वहाँ से नहीं। मैंने इसे वहाँ मज़बूती से स्थापित किया है जिससे इंद्र के अनुग्रह से इसके उत्तम पुत्र हों और पति के प्रेम का सौभाग्य इसे प्राप्त हो।

इंद्र शौर्य, युद्ध और वर्षा के एक प्रमुख देवता थे। ‘यहाँ’ और ‘वहाँ’ से तात्पर्य पिता और पति के गृह से है।

➲ इस मंत्र के संदर्भ में, विवाह का वधू और वर के लिए क्या अभिप्राय है? इसकी चर्चा कीजिए। क्या ये अभिप्राय समान हैं या फिर इनमें भिन्नताएँ हैं?

स्रोत 2

स्वजन के मध्य लड़ाई क्यों हुई?

यह उद्धरण संस्कृत महाभारत के *आदिपर्वन्* (प्रथम अध्याय) से है और कौरव पांडव के बीच हुए संघर्ष का चित्रण करता है:

कौरव...धृतराष्ट्र के पुत्र थे और पांडव उनके बांधव जन थे। चूँकि धृतराष्ट्र नेत्रहीन थे अत: उनके अनुज पांडु हस्तिनापुर के सिंहासन पर आसीन हुए... किंतु पांडु की असामयिक मृत्यु के बाद धृतराष्ट्र राजा बने, क्योंकि सभी राजकुमार अल्पवयस्क थे। जैसे-जैसे राजकुमार बड़े हुए हस्तिनापुर के नागरिक पांडवों के प्रति अपनी अभिरुचि व्यक्त करने लगे क्योंकि वे कौरवों के मुकाबले अधिक योग्य और सदाचारी थे। इस बात से कौरवों में ज्येष्ठ, दुर्योधन को बहुत ईर्ष्या हुई। वह अपने पिता के पास गया और बोला, "हे भूपति, अपूर्णता के कारण आपको सिंहासन पर बैठने का अधिकार नहीं था हालाँकि यह आपको प्राप्त हो गया। यदि पांडव पांडु से यह विरासत प्राप्त करते हैं तो उनके बाद उनके पुत्र, पौत्र और फिर प्रपौत्र इस पैतृक संपत्ति के अधिकारी हो जाएँगे और हम तथा हमारे पुत्र इस राज्य के उत्तराधिकार से बेदखल होकर संसार में क्षुद्र समझे जाएँगे।"

इस तरह के उद्धरण अक्षरश: सत्य न भी हों तो भी वे इस बात का अनुमान करा देते हैं कि जिन लोगों ने यह ग्रंथ लिखा वे क्या सोचते थे। कभी-कभी, जैसे यहाँ, प्रकरणों में परस्पर विरोधी विचार मिलते हैं।

➲ उद्धरण पढ़िए और उन सारे मूल तत्वों की सूची तैयार कीजिए जिनका राजा बनने के लिए प्रस्ताव किया गया है। एक विशेष कुल में जन्म लेना कितना महत्वपूर्ण था? इनमें से कौन-सा मूल तत्व सही लगता है? क्या ऐसा कोई तत्व है जो आपको अनुचित लगता है?

2.3 विवाह के नियम

जहाँ पितृवंश को आगे बढ़ाने के लिए पुत्र महत्वपूर्ण थे वहाँ इस व्यवस्था में पुत्रियों को अलग तरह से देखा जाता था। पैतृक संसाधनों पर उनका कोई अधिकार नहीं था। अपने गोत्र से बाहर उनका विवाह कर देना ही अपेक्षित था। इस प्रथा को बहिर्विवाह पद्धति कहते हैं और इसका तात्पर्य यह था कि ऊँची प्रतिष्ठा वाले परिवारों की कम उम्र की कन्याओं और स्त्रियों का जीवन बहुत सावधानी से नियमित किया जाता था जिससे 'उचित' समय और 'उचित' व्यक्ति से उनका विवाह किया जा सके। इसका प्रभाव यह हुआ कि कन्यादान अर्थात् विवाह में कन्या की भेंट को पिता का महत्वपूर्ण धार्मिक कर्तव्य माना गया।

नए नगरों के उद्भव से (अध्याय 2) सामाजिक जीवन अधिक जटिल हुआ। यहाँ पर निकट और दूर से आकर लोग मिलते थे और वस्तुओं की खरीद-फ़रोख्त के साथ ही इस नगरीय परिवेश में विचारों

विवाह के प्रकार

अंतर्विवाह में वैवाहिक संबंध समूह के मध्य ही होते हैं। यह समूह एक गोत्र कुल अथवा एक जाति या फिर एक ही स्थान पर बसने वालों का हो सकता है।

बहिर्विवाह गोत्र से बाहर विवाह करने को कहते हैं।

बहुपत्नी प्रथा एक पुरुष की अनेक पत्नियाँ होने की सामाजिक परिपाटी है।

बहुपति प्रथा एक स्त्री के अनेक पति होने की पद्धति है।

स्रोत 3

विवाह के आठ प्रकार

यहाँ *मनुस्मृति* से पहली, चौथी, पाँचवीं और छठी विवाह पद्धति का उद्धरण दिया जा रहा है :

पहली : कन्या का दान, बहुमूल्य वस्त्रों और अलंकारों से विभूषित कर उसे वेदज्ञ वर को दान दिया जाए जिसे पिता ने स्वयं आमंत्रित किया हो।

चौथी : पिता वर-वधू युगल को यह कहकर संबोधित करता है कि : "तुम साथ मिलकर अपने दायित्वों का पालन करो।" तत्पश्चात वह वर का सम्मान कर उसे कन्या का दान करता है।

पाँचवीं : वर को वधू की प्राप्ति तब होती है जब वह अपनी क्षमता व इच्छानुसार उसके बांधवों को और स्वयं वधू को यथेष्ट धन प्रदान करता है।

छठीं : स्त्री और पुरुष के बीच अपनी इच्छा से संयोग... जिसकी उत्पत्ति काम से है...

➲ इनमें से प्रत्येक विवाह पद्धति के विषय में चर्चा कीजिए कि विवाह का निर्णय किसके द्वारा लिया गया था :
(क) वधू
(ख) वर
(ग) वधू का पिता
(घ) वर का पिता
(ङ) अन्य लोग

का भी आदान-प्रदान होता था। संभवत: इस वजह से आरंभिक विश्वासों और व्यवहारों (देखिए अध्याय 4) पर प्रश्नचिह्न लगाए गए। इस चुनौती के जवाब में ब्राह्मणों ने समाज के लिए विस्तृत आचार संहिताएँ तैयार कीं। ब्राह्मणों को इन आचार संहिताओं का विशेष पालन करना होता था किंतु बाकी समाज को भी इसका अनुसरण करना पड़ता था। लगभग 500 ई.पू. से इन मानदंडों का संकलन धर्मसूत्र व धर्मशास्त्र नामक संस्कृत ग्रंथों में किया गया। इसमें सबसे महत्वपूर्ण *मनुस्मृति* थी जिसका संकलन लगभग 200 ई.पू. से 200 ईसवी के बीच हुआ।

हालाँकि इन ग्रंथों के ब्राह्मण लेखकों का यह मानना था कि उनका दृष्टिकोण सार्वभौमिक है और उनके बनाए नियमों का सबके द्वारा पालन होना चाहिए, किंतु वास्तविक सामाजिक संबंध कहीं अधिक जटिल थे। इस बात को भी ध्यान में रखना ज़रूरी है कि उपमहाद्वीप में फैली क्षेत्रीय विभिन्नता और संचार की बाधाओं की वजह से भी ब्राह्मणों का प्रभाव सार्वभौमिक कदापि नहीं था।

दिलचस्प बात यह है कि धर्मसूत्र और धर्मशास्त्र विवाह के आठ प्रकारों को अपनी स्वीकृति देते हैं। इनमें से पहले चार 'उत्तम' माने जाते थे और बाकियों को निंदित माना गया। संभव है कि ये विवाह पद्धतियाँ उन लोगों में प्रचलित थीं जो ब्राह्मणीय नियमों को अस्वीकार करते थे।

2.4 स्त्री का गोत्र

एक ब्राह्मणीय पद्धति जो लगभग 1000 ई.पू. के बाद से प्रचलन में आई, वह लोगों (खासतौर से ब्राह्मणों) को गोत्रों में वर्गीकृत करने की थी। प्रत्येक गोत्र एक वैदिक ऋषि के नाम पर होता था। उस गोत्र के सदस्य ऋषि के वंशज माने जाते थे। गोत्रों के दो नियम महत्वपूर्ण थे : विवाह के पश्चात स्त्रियों को पिता के स्थान पर पति के गोत्र का माना जाता था तथा एक ही गोत्र के सदस्य आपस में विवाह संबंध नहीं रख सकते थे।

क्या इन नियमों का सामान्यत: अनुसरण होता था, इस बात को जानने के लिए हमें स्त्री और पुरुष नामों का विश्लेषण करना पड़ेगा जो कभी-कभी गोत्रों के नाम से उद्धृत होते थे। हमें कुछ नाम सातवाहनों जैसे प्रबल शासकों के वंश से मिलते हैं। इन राजाओं का पश्चिमी भारत और दक्कन के कुछ भागों पर शासन था (लगभग दूसरी शताब्दी ई.पू. से दूसरी शताब्दी ईसवी तक)। सातवाहनों के कई अभिलेख प्राप्त हुए हैं जिनके आधार पर इतिहासकारों ने पारिवारिक और वैवाहिक रिश्तों का खाका तैयार किया है।

स्रोत 4

अभिलेखों से सातवाहन राजाओं के नाम

अभिलेखों से सातवाहन राजाओं की कई पीढ़ियों के नाम प्राप्त हुए हैं। इन सभी नामों में *राजा* की एक जैसी पदवी पर ध्यान दीजिए। इसके अलावा अगले शब्द को भी लक्षित कीजिए जिसका *पुत्त* से अंत होता है। यह एक प्राकृत शब्द है जिसका अर्थ 'पुत्र' है। गोतमी-पुत्त का अर्थ है 'गोतमी का पुत्र'। गोतमी और वसिथि स्त्रीवाची नाम हैं गौतम और वशिष्ठ के। ये दोनों वैदिक ऋषि थे जिनके नाम से गोत्र हैं।

राजा गोतमी-पुत्त सिरी-सातकनि

राजा वसिथि-पुत्त (सामि) सिरि-पुलुमायि

राजा गोतमी-पुत्त सामि-सिरि-यन-सातकनि

राजा मधारि-पुत्त स्वामि-सकसेन

राजा हरिति-पुत्त चत्तरपन-सातकनि

राजा हरिति-पुत्त विनहुकद चतुकुलानम्द-सातकमनि

राजा गोतमी-पुत्त सिरी-विजय-सातकनि

➲ यहाँ कितने गोतमी-पुत्त तथा कितने वसिथि (वैकल्पिक वर्तनी वसथि) पुत्त हैं?

चित्र 3.3
एक सातवाहन राजा तथा उसकी पत्नी
सातवाहन राजाओं की आकृतियाँ बहुधा उन गुफाओं की भित्तियों पर उत्कीर्ण की जाती थीं जिन्हें बौद्ध भिक्षुओं को दान में दिया जाता था। यह मूर्ति लगभग दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व की है।

उपनिषद में मातृनाम

बृहदारण्यक उपनिषद में जो आरंभिक उपनिषदों में से एक है (देखिए अध्याय 4) आचार्यों और शिष्यों की उत्तरोत्तर पीढ़ियों की सूची मिलती है, जिसमें से कई लोगों को उनके मातृनामों से निर्दिष्ट किया गया था।

स्रोत 5

माता की सलाह

महाभारत में उल्लेख मिलता है कि जब कौरवों और पांडवों के बीच युद्ध अवश्यंभावी हो गया तो गांधारी ने अपने ज्येष्ठ पुत्र दुर्योधन से युद्ध न करने की विनती की :

> शांति की संधि करके तुम अपने पिता, मेरा तथा अपने शुभेच्छुकों का सम्मान करोगे.... विवेकी पुरुष जो अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण रखता है वही अपने राज्य की रखवाली करता है। लालच और क्रोध आदमी को लाभ से दूर खदेड़कर ले जाते हैं; इन दोनों शत्रुओं को पराजित कर राजा समस्त पृथ्वी को जीत सकता है... हे पुत्र तुम विवेकी और वीर पांडवों के साथ सानंद इस पृथ्वी का भोग करोगे... युद्ध में कुछ भी शुभ नहीं होता, ना धर्म और अर्थ की प्राप्ति होती है और ना ही प्रसन्नता की; युद्ध के अंत में सफलता मिले यह भी ज़रूरी नहीं... अपने मन को युद्ध में लिप्त मत करो...
>
> दुर्योधन ने माँ की सलाह नहीं मानी, वह युद्ध में लड़ा और हार गया।

➲ क्या यह उद्धरण आपको आरंभिक भारतीय समाज में माँ को किस दृष्टि से देखा जाता था इसका जायज़ा देता है।

➲ चर्चा कीजिए...

आजकल बच्चों का नामकरण किस भाँति होता है? क्या ये नाम इस अंश में वर्णित नामों से मिलते-जुलते हैं अथवा भिन्न हैं?

कुछ सातवाहन राजा बहुपत्नी प्रथा (अर्थात् एक से अधिक पत्नी) को मानने वाले थे। सातवाहन राजाओं से विवाह करने वाली रानियों के नामों का विश्लेषण इस तथ्य की ओर इंगित करता है कि उनके नाम गौतम तथा वसिष्ठ गोत्रों से उद्‌भूत थे जो उनके पिता के गोत्र थे। इससे प्रतीत होता है कि विवाह के बाद भी अपने पति कुल के गोत्र को ग्रहण करने की अपेक्षा, जैसा ब्राह्मणीय व्यवस्था में अपेक्षित था, उन्होंने पिता का गोत्र नाम ही कायम रखा। यह भी पता चलता है कि कुछ रानियाँ एक ही गोत्र से थीं। यह तथ्य बहिर्विवाह पद्धति के नियमों के विरुद्ध था। वस्तुतः यह उदाहरण एक वैकल्पिक प्रथा अंतर्विवाह पद्धति अर्थात् बंधुओं में विवाह संबंध को दर्शाता है जिसका प्रचलन दक्षिण भारत के कई समुदायों में (भी) है। बांधवों (ममेरे, चचेरे इत्यादि भाई-बहन) के साथ जोड़े गए विवाह संबंधों की वजह से एक सुगठित समुदाय उभर पाता था।

संभवतः उपमहाद्वीप के और भागों में अन्य विविधताएँ भी मौजूद थीं किंतु उनके विशिष्ट ब्योरों को पुनर्निर्मित करना संभव नहीं हो पाया है।

2.5 क्या माताएँ महत्वपूर्ण थीं?

हमने पढ़ा कि सातवाहन राजाओं को उनके मातृनाम (माता के नाम से उद्‌भूत) से चिह्नित किया जाता था। इससे यह प्रतीत होता है कि माताएँ महत्वपूर्ण थीं किंतु किसी भी निष्कर्ष पर पहुँचने से पहले हमें बहुत सावधानी बरतनी होगी। सातवाहन राजाओं के संदर्भ में हमें यह ज्ञात है कि सिंहासन का उत्तराधिकार पितृवंशिक होता था।

चित्र 3.4

एक युद्ध का दृश्य

यह महाभारत के दृश्यों के सबसे प्राचीन मूर्ति चित्रणों में से एक है। यह मिट्टी की मूर्ति अहिच्छत्र (उत्तर प्रदेश) के एक मंदिर की दीवार पर उत्कीर्ण है जो लगभग पाँचवीं शताब्दी ईसवी की है।

3. सामाजिक विषमताएँ
वर्ण व्यवस्था के दायरे में और उससे परे

संभवतः आप 'जाति' शब्द से परिचित होंगे जो एक सोपानात्मक सामाजिक वर्गीकरण को दर्शाता है। धर्मसूत्रों और धर्मशास्त्रों में एक आदर्श व्यवस्था का उल्लेख किया गया था। ब्राह्मणों का यह मानना था कि यह व्यवस्था जिसमें स्वयं उन्हें पहला दर्ज़ा प्राप्त है, एक दैवीय व्यवस्था है। शूद्रों और 'अस्पृश्यों' को सबसे निचले स्तर पर रखा जाता था। इस व्यवस्था में दर्ज़ा संभवतः जन्म के अनुसार निर्धारित माना जाता था।

3.1 'उचित' जीविका

धर्मसूत्रों और धर्मशास्त्रों में चारों वर्गों के लिए आदर्श 'जीविका' से जुड़े कई नियम मिलते हैं। ब्राह्मणों का कार्य अध्ययन, वेदों की शिक्षा, यज्ञ करना और करवाना था तथा उनका काम दान देना और लेना था। क्षत्रियों का कर्म युद्ध करना, लोगों को सुरक्षा प्रदान करना, न्याय करना, वेद पढ़ना, यज्ञ करवाना और दान-दक्षिणा देना था। अंतिम तीन कार्य वैश्यों के लिए भी थे साथ ही उनसे कृषि, गौ-पालन और व्यापार का कर्म भी अपेक्षित था। शूद्रों के लिए मात्र एक ही जीविका थी–तीनों 'उच्च' वर्णों की सेवा करना।

इन नियमों का पालन करवाने के लिए ब्राह्मणों ने दो-तीन नीतियाँ अपनाईं। एक, जैसा कि हमने अभी पढ़ा, यह बताया गया कि वर्ण व्यवस्था की उत्पत्ति एक दैवीय व्यवस्था है। दूसरा, वे शासकों को यह उपदेश देते थे कि वे इस व्यवस्था के नियमों का अपने राज्यों में अनुसरण करें। तीसरे, उन्होंने लोगों को यह विश्वास दिलाने का प्रयत्न किया कि उनकी प्रतिष्ठा जन्म पर आधारित है। किंतु ऐसा करना आसान बात नहीं थी। अतः इन मानदंडों को बहुधा महाभारत जैसे अनेक ग्रंथों में वर्णित कहानियों के द्वारा बल प्रदान किया जाता था।

स्रोत 6

एक दैवीय व्यवस्था?

अपनी मान्यता को प्रमाणित करने के लिए ब्राह्मण बहुधा ऋग्वेद के *पुरुषसूक्त* मंत्र को उद्धृत करते थे जो आदि मानव पुरुष की बलि का चित्रण करता है। जगत के सभी तत्व जिनमें चारों वर्ण शामिल हैं, इसी पुरुष के शरीर से उपजे थे।

ब्राह्मण उसका मुँह था, उसकी भुजाओं से क्षत्रिय निर्मित हुआ।

वैश्य उसकी जंघा थी, उसके पैर से शूद्र की उत्पत्ति हुई।

➲ आपको क्या लगता है कि ब्राह्मण इस सूक्त को बहुधा क्यों उद्धृत करते थे?

स्रोत 7

'उचित' सामाजिक कर्तव्य

महाभारत के *आदिपर्वन्* से एक कहानी उद्धृत है :

एक बार ब्राह्मण द्रोण के पास, जो कुरु वंश के राजकुमारों को धनुर्विद्या की शिक्षा देते थे, एकलव्य नामक वनवासी निषाद (शिकारी समुदाय) आया। द्रोण ने जो धर्म समझते थे, उसे शिष्य के रूप में स्वीकार करने से मना कर दिया। एकलव्य ने वन में लौट कर मिट्टी से द्रोण की प्रतिमा बनाई तथा उसे अपना गुरु मान कर वह स्वयं ही तीर चलाने का अभ्यास करने लगा। समय के साथ वह तीर चलाने में सिद्धहस्त हो गया। एक दिन कुरु राजकुमार अपने कुत्ते के साथ जंगल में शिकार करते हुए एकलव्य के समीप पहुँच गए। कुत्ता काले मृग की चमड़ी के वस्त्र में लिपटे निषाद को देखकर भौंकने लगा। क्रोधित होकर एकलव्य ने एक साथ सात तीर चलाकर उसका मुँह बंद कर दिया। जब वह कुत्ता लौटा तो पांडव तीरंदाज़ी का यह अद्भुत दृश्य देखकर आश्चर्यचकित हो गए। उन्होंने एकलव्य को तलाशा, उसने स्वयं को द्रोण का शिष्य बताया।

द्रोण ने अपने प्रिय शिष्य अर्जुन से एक बार यह कहा था कि वह उनके सभी शिष्यों में अद्वितीय तीरंदाज़ बनेगा। अर्जुन ने द्रोण को उनका यह प्रण याद दिलाया। द्रोण एकलव्य के पास गए जिसने उन्हें अपना गुरु मानकर प्रणाम किया। तब द्रोण ने गुरु दक्षिणा के रूप में एकलव्य से उसके दाहिने हाथ का अँगूठा माँग लिया। एकलव्य ने फ़ौरन गुरु को अपना अँगूठा काट कर दे दिया। अब एकलव्य तीर चलाने में उतना तेज़ नहीं रहा। इस तरह द्रोण ने अर्जुन को दिए वचन को निभाया : कोई भी अर्जुन से बेहतर धनुर्धारी नहीं रहा।

➲ इस कहानी के द्वारा निषादों को कौन-सा संदेश दिया जा रहा था? क्षत्रियों को इससे क्या संदेश मिला होगा? क्या आपको लगता है कि एक ब्राह्मण के रूप में द्रोण धर्मसूत्र का अनुसरण कर रहे थे जब वे धनुर्विद्या की शिक्षा दे रहे थे?

3.2 अक्षत्रिय राजा

शास्त्रों के अनुसार केवल क्षत्रिय राजा हो सकते थे। किंतु अनेक महत्वपूर्ण राजवंशों की उत्पत्ति अन्य वर्णों से भी हुई थी। मौर्य वंश जिसने एक विशाल साम्राज्य पर शासन किया, के उद्भव पर गर्मजोशी से बहस होती रही है। बाद के बौद्ध ग्रंथों में यह इंगित किया गया है कि वे क्षत्रिय थे किंतु ब्राह्मणीय शास्त्र उन्हें 'निम्न' कुल का मानते हैं। शुंग और कण्व जो मौर्यों के उत्तराधिकारी थे, ब्राह्मण थे। वस्तुत: राजनीतिक सत्ता का उपभोग हर वह व्यक्ति कर सकता था जो समर्थन और संसाधन जुटा सके। राजत्व क्षत्रिय कुल में जन्म लेने पर शायद ही निर्भर करता था।

अन्य शासकों को, जैसे शक जो मध्य एशिया से भारत आए, ब्राह्मण मलेच्छ, बर्बर अथवा अन्यदेशीय मानते थे। किंतु संस्कृत के संभवत:

आरंभिक अभिलेखों में से एक में प्रसिद्ध शक राजा रुद्रदामन (लगभग दूसरी शताब्दी ईसवी) द्वारा सुदर्शन सरोवर के जीर्णोद्धार (अध्याय 2) का वर्णन मिलता है। इससे यह ज्ञात होता है कि शक्तिशाली मलेच्छ संस्कृतीय परिपाटी से अवगत थे।

एक और दिलचस्प बात यह है कि सातवाहन कुल के सबसे प्रसिद्ध शासक गोतमी-पुत्त सिरी-सातकनि ने स्वयं को अनूठा ब्राह्मण और साथ ही क्षत्रियों के दर्प का हनन करने वाला बताया था। उसने यह भी दावा किया कि चार वर्णों के बीच विवाह संबंध होने पर उसने रोक लगाई। किंतु फिर भी रुद्रदामन के परिवार से उसने विवाह संबंध स्थापित किए।

जैसा आप इस उदाहरण में देख सकते हैं, जाति प्रथा के भीतर आत्मसात होना बहुधा एक जटिल सामाजिक प्रक्रिया थी। सातवाहन स्वयं को ब्राह्मण वर्ण का बताते थे जबकि ब्राह्मणीय शास्त्र के अनुसार राजा को क्षत्रिय होना चाहिए। वे चतुर्वर्णी व्यवस्था की मर्यादा बनाए रखने का दावा करते थे किंतु साथ ही उन लोगों से वैवाहिक संबंध भी स्थापित करते थे जो इस वर्ण व्यवस्था से ही बाहर थे और जैसा हमने देखा वह अंतर्विवाह पद्धति का पालन करते थे न कि बहिर्विवाह प्रणाली का जो ब्राह्मणीय ग्रंथों में प्रस्तावित है।

चित्र 3.5
शक शासक को चित्रित करता चाँदी का सिक्का, लगभग चौथी शताब्दी ईसवी

3.3 जाति और सामाजिक गतिशीलता

ये जटिलताएँ समाज के वर्गीकरण के लिए शास्त्रों में प्रयुक्त एक और शब्द *जाति* से भी स्पष्ट होती हैं। ब्राह्मणीय सिद्धांत में वर्ण की तरह जाति भी जन्म पर आधारित थी। किंतु वर्ण जहाँ मात्र चार थे वहीं जातियों की कोई निश्चित संख्या नहीं थी। वस्तुतः जहाँ कहीं भी ब्राह्मणीय व्यवस्था का नए समुदायों से आमना-सामना हुआ - उदाहरणतः जंगल में रहने वाले निषाद या फिर व्यावसायिक वर्ग जैसे सुवर्णकार, जिन्हें चार वर्णों वाली व्यवस्था में समाहित करना संभव नहीं था, उनका जाति में वर्गीकरण कर दिया गया। वे जातियाँ जो एक ही जीविका अथवा व्यवसाय से जुड़ी थीं उन्हें कभी-कभी श्रेणियों में भी संगठित किया जाता था।

हालाँकि इन समुदायों के इतिहास का लेखा-जोखा हमें कम ही प्राप्त होता है, किंतु कुछ अपवाद हैं जैसे कि मंदसौर (मध्य प्रदेश) से मिला अभिलेख (लगभग पाँचवीं शताब्दी ईसवी)। इसमें रेशम के बुनकरों की एक श्रेणी का वर्णन मिलता है जो मूलतः लाट (गुजरात) प्रदेश के निवासी थे और वहाँ से मंदसौर चले गए थे, जिसे उस समय दशपुर के नाम से जाना जाता था। यह कठिन यात्रा उन्होंने अपने बच्चों और बांधवों

के साथ संपन्न की। उन्होंने वहाँ के राजा की महानता के बारे में सुना था अत: वे उसके राज्य में बसना चाहते थे।

यह अभिलेख जटिल सामाजिक प्रक्रियाओं की झलक देता है तथा श्रेणियों के स्वरूप के विषय में अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। हालाँकि श्रेणी की सदस्यता शिल्प में विशेषज्ञता पर निर्भर थी। कुछ सदस्य अन्य जीविका भी अपना लेते थे। इस अभिलेख से यह भी ज्ञात होता है कि सदस्य एक व्यवसाय के अतिरिक्त और चीज़ों में भी सहभागी होते थे। सामूहिक रूप से उन्होंने शिल्पकर्म से अर्जित धन को सूर्य देवता के सम्मान में मंदिर बनवाने पर खर्च किया।

वणिकों की स्थिति

संस्कृत के ग्रंथ और अभिलेखों में व्यापारियों के लिए वणिक शब्द प्रयुक्त किया जाता है। हालाँकि शास्त्रों में व्यापार को वैश्यों की जीविका बताया जाता है अन्य स्रोतों में अधिक जटिल परिस्थिति देखने को मिलती है। जैसे शूद्रक के नाटक *मृच्छकटिकम्* (लगभग चौथी शताब्दी ईसवी) में नायक चारुदत्त को *ब्राह्मण-वणिक* बताया गया है। पाँचवीं शताब्दी ईसवी के एक अभिलेख में दो भाइयों को *क्षत्रिय-वणिक* कहा गया है, जिन्होंने एक मंदिर के निर्माण के लिए धन दिया।

स्रोत 8

रेशम बुनकरों ने क्या किया?

निम्नलिखित अंश संस्कृत के एक अभिलेख से उद्धृत है :

> कुछ लोगों को संगीत से अत्यंत प्रेम है जो कानों को प्रिय होता है; अन्य को गर्व है सैकड़ों उत्तम जीवनियों (के रचयिता होने) का, इस तरह वे अनेक कथाओं से परिचित हैं। (अन्य) विनीत भाव से उत्तम धार्मिक व्याख्यानों में तल्लीन हैं... कुछ लोग अपने धार्मिक अनुष्ठानों में श्रेष्ठ हैं; इसी तरह अपने पर निग्रह रखने वाले (वैदिक) खगोल शास्त्र में पारंगत हैं। अन्य जन युद्ध करने में शूरवीर, शत्रुओं का अनिष्ट करते हैं।

➲ क्या आपको लगता है कि रेशम के बुनकर उस जीविका का पालन कर रहे थे जो उनके लिए शास्त्रों ने तय की थी?

3.4 चार वर्णों के परे : एकीकरण

उपमहाद्वीप में पाई जाने वाली विविधताओं की वजह से यहाँ हमेशा से ऐसे समुदाय रहे हैं जिन पर ब्राह्मणीय विचारों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। संस्कृत साहित्य में जब ऐसे समुदायों का उल्लेख आता है तो उन्हें कई बार विचित्र, असभ्य और पशुवत चित्रित किया जाता है। ऐसे कुछ उदाहरण वन प्रांतर में बसने वाले लोगों के हैं जिनके लिए शिकार और कंद-मूल संग्रह करना जीवन-निर्वाह का महत्वपूर्ण साधन था। निषाद वर्ग जिससे एकलव्य जुड़ा माना जाता था, इसी का उदाहरण है।

यायावर पशुपालकों के समुदाय को भी शंका की दृष्टि से देखा जाता था क्योंकि उन्हें आसानी से बसे हुए कृषिकर्मियों के साँचे के अनुरूप नहीं ढाला जा सकता था। यदा-कदा उन लोगों को जो असंस्कृत भाषी

थे, उन्हें मलेच्छ कहकर हेय दृष्टि से देखा जाता था। किंतु इन लोगों के बीच विचारों और मतों का आदान-प्रदान होता था। उनके संबंधों के स्वरूप के बारे में हमें महाभारत की कथाओं से ज्ञात होता है।

स्रोत 9

बाघ सदृश पति

यह सारांश महाभारत के *आदिपर्वन्* से उद्धृत कहानी का है :

पांडव गहन वन में चले गए थे। थक कर वे सो गए; केवल द्वितीय पांडव भीम जो अपने बल के लिए प्रसिद्ध थे, रखवाली करते रहे। एक नरभक्षी राक्षस को पांडवों की मानुष गंध ने विचलित किया और उसने अपनी बहन हिडिम्बा को उन्हें पकड़कर लाने के लिए भेजा। हिडिम्बा भीम को देखकर मोहित हो गई और एक सुंदर स्त्री के वेष में उसने भीम से विवाह का प्रस्ताव किया, जिसे उन्होंने अस्वीकार कर दिया। इस बीच राक्षस वहाँ आ गया और उसने भीम को मल्ल युद्ध के लिए ललकारा। भीम ने उसकी चुनौती को स्वीकार किया और उसका वध कर दिया। शोर सुनकर अन्य पांडव जाग गए। हिडिम्बा ने उन्हें अपना परिचय दिया और भीम के प्रति अपने प्रेम से उन्हें अवगत कराया। वह कुंती से बोली : "हे उत्तम देवी, मैंने मित्र, बांधव और अपने धर्म का भी परित्याग कर दिया है और आपके बाघ सदृश पुत्र का अपने पति के रूप में चयन किया है... चाहे आप मुझे मूर्ख समझें अथवा अपनी समर्पित दासी, कृपया मुझे अपने साथ लें तथा आपका पुत्र मेरा पति हो।"

अंततः युधिष्ठिर इस शर्त पर इस विवाह के लिए तैयार हो गए कि भीम दिनभर हिडिम्बा के साथ रहकर रात्रि में उनके पास आ जाएँगे। यह दंपति दिन भर सभी लोकों की सैर करते। समय आने पर हिडिम्बा ने एक राक्षस पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम घटोत्कच रखा। तत्पश्चात माँ और पुत्र पांडवों को छोड़कर वन में चले गए किंतु घटोत्कच ने यह प्रण किया कि जब भी पांडवों को उसकी ज़रूरत होगी वह उपस्थित हो जाएगा।

कुछ इतिहासकारों का यह मत है कि राक्षस उन लोगों को कहा जाता था जिनके आचार-व्यवहार उन मानदंडों से भिन्न थे जिनका चित्रण ब्राह्मणीय ग्रंथों में हुआ था।

➲ इस सारांश में उन व्यवहारों को निर्दिष्ट कीजिए जो अब्राह्मणीय प्रतीत होते हैं।

3.5 चार वर्णों के परे : अधीनता और संघर्ष

ब्राह्मण कुछ लोगों को वर्ण व्यवस्था वाली सामाजिक प्रणाली के बाहर मानते थे। साथ ही उन्होंने समाज के कुछ वर्गों को 'अस्पृश्य' घोषित कर सामाजिक वैषम्य को और अधिक प्रखर बनाया। ब्राह्मणों का यह मानना था कि कुछ कर्म, खासतौर से वे जो अनुष्ठानों के संपादन से जुड़े थे, पुनीत और 'पवित्र' थे, अतः अपने को पवित्र मानने वाले लोग अस्पृश्यों

से भोजन नहीं स्वीकार करते थे। पवित्रता के इस पहलू के ठीक विपरीत कुछ कार्य ऐसे थे जिन्हें खासतौर से 'दूषित' माना जाता था। शवों की अंत्येष्टि और मृत पशुओं को छूने वालों को चाण्डाल कहा जाता था। उन्हें वर्ण व्यवस्था वाले समाज में सबसे निम्न कोटि में रखा जाता था। वे लोग जो स्वयं को सामाजिक क्रम में सबसे ऊपर मानते थे, इन चाण्डालों का स्पर्श, यहाँ तक कि उन्हें देखना भी, अपवित्रकारी मानते थे।

मनुस्मृति में चाण्डालों के 'कर्तव्यों' की सूची मिलती है। उन्हें गाँव के बाहर रहना होता था। वे फेंके हुए बर्तनों का इस्तेमाल करते थे, मरे हुए लोगों के वस्त्र तथा लोहे के आभूषण पहनते थे। रात्रि में वे गाँव और नगरों में चल-फिर नहीं सकते थे। संबंधियों से विहीन मृतकों की उन्हें अंत्येष्टि करनी पड़ती थी तथा वधिक के रूप में भी कार्य करना होता था। चीन से आए बौद्ध भिक्षु फा-शिएन (लगभग पाँचवीं शताब्दी ईसवी) का कहना है कि अस्पृश्यों को सड़क पर चलते हुए करताल बजाकर अपने होने की सूचना देनी पड़ती थी जिससे अन्य जन उन्हें देखने के दोष से बच जाएँ। एक और चीनी तीर्थयात्री श्वैन-त्सांग (लगभग सातवीं शताब्दी ईसवी) कहता है कि वधिक और सफ़ाई करने वालों को नगर से बाहर रहना पड़ता था।

चित्र 3.6
एक भिक्षु का चित्रण, पत्थर की मूर्ति (गांधार) लगभग तीसरी शताब्दी ईसवी

अब्राह्मणीय ग्रंथों में चित्रित चाण्डालों के जीवन का विश्लेषण करके इतिहासकारों ने यह जानने का प्रयास किया है कि क्या चाण्डालों ने शास्त्रों में निर्धारित अपने हीन जीवन को स्वीकार कर लिया था? यदा-कदा इन ग्रंथों के चित्रण और ब्राह्मणीय ग्रंथ में हुए चित्रण में समानता है परंतु कभी-कभी हमें एक भिन्न सामाजिक वास्तविकता का भी संकेत मिलता है।

स्रोत 10

बोधिसत्त एक चाण्डाल के रूप में

क्या चाण्डालों ने अपने को समाज की सबसे निचली श्रेणी में रखे जाने का प्रतिरोध किया? यह कहानी पढ़िए जो पालि में लिखी *मातंग जातक* से ली गई है। इस कथा में बोधिसत्त (पूर्वजन्म में बुद्ध) एक चाण्डाल के रूप में चित्रित हैं।

एक बार बोधिसत्त ने बनारस नगर के बाहर एक चाण्डाल के पुत्र के रूप में जन्म लिया, उनका नाम मातंग था। एक दिन वे किसी कार्यवश नगर में गए और वहाँ उनकी मुलाकात दिथ्थ मांगलिक नामक एक व्यापारी की पुत्री से हुई। उन्हें देखकर वह चिल्लाई "मैंने कुछ अशुभ देख लिया है।" यह कहकर उसने अपनी आँखें धोईं। उसके क्रोधित सेवकों ने मातंग की पिटाई की। विरोध में मातंग व्यापारी के घर के दरवाज़े के बाहर जाकर लेट गए। सातवें रोज़ घर के लोगों ने बाहर आकर दिथ्थ को उन्हें सौंप दिया। दिथ्थ उपवास से क्षीण हुए मातंग को लेकर चाण्डाल बस्ती में आई। घर लौटने पर मातंग ने संसार त्यागने का निर्णय लिया। अलौकिक शक्ति हासिल करने के उपरांत वह बनारस लौटे और उन्होंने दिथ्थ से विवाह कर लिया। माण्डव्यकुमार नामक उनका एक पुत्र हुआ। बड़े होने पर उसने तीन वेदों का अध्ययन किया तथा प्रत्येक दिन वह 16,000 ब्राह्मणों को भोजन कराता था।

एक दिन फटे वस्त्र पहने तथा मिट्टी का भिक्षा पात्र हाथ में लिए मातंग अपने पुत्र के दरवाज़े पर आए और उन्होंने भोजन माँगा। माण्डव्य ने कहा कि वे एक पतित आदमी प्रतीत होते हैं अत: भिक्षा के योग्य नहीं, भोजन ब्राह्मणों के लिए है। मातंग ने उत्तर दिया, "जिन्हें अपने जन्म पर गर्व है पर अज्ञानी हैं वे भेंट के पात्र नहीं हैं। इसके विपरीत जो लोग दोषमुक्त हैं वे भेंट के योग्य हैं।" माण्डव्य ने क्रोधित होकर अपने सेवकों से मातंग को घर से बाहर निकालने को कहा। मातंग आकाश में जाकर अदृश्य हो गए। जब दिथ्थ मांगलिक को इस प्रसंग के बारे में पता चला तो वह उनसे माफ़ी माँगने के लिए उनके पीछे आई। मातंग ने उससे कहा कि वह उनके भिक्षा पात्र में बचे हुए भोजन का कुछ अंश माण्डव्य तथा ब्राह्मणों को दे दें...

➲ इस कथा में उन तत्वों की ओर इंगित कीजिए जिनसे यह ज्ञात हो कि वह मातंग के नज़रिए से लिखे गए थे।

➲ चर्चा कीजिए...

इस प्रकरण में कौन से स्रोत हैं जिनसे यह ज्ञात होता है कि लोग ब्राह्मणों द्वारा बताई गई जीविका का अनुसरण करते थे? कौन से स्रोत हैं जिनसे अलग संभावनाओं की जानकारी मिलती है?

4. जन्म के परे

संसाधन और प्रतिष्ठा

यदि आप अध्याय 2 में वर्णित आर्थिक संबंधों पर विचार करें तो देखेंगे कि दास, भूमिहीन खेतिहर मज़दूर, शिकारी, मछुआरे, पशुपालक, किसान, ग्राममुखिया, शिल्पकार, वणिक और राजा सभी का उपमहाद्वीप के विभिन्न हिस्सों में सामाजिक अभिनायक के रूप में उद्‌भव हुआ। उनके सामाजिक स्थान इस बात पर निर्भर करते थे कि आर्थिक संसाधनों पर उनका कितना नियंत्रण है। अब हम विशेष संदर्भों में इस बात का परीक्षण करेंगे कि संसाधनों पर नियंत्रण के क्या सामाजिक आशय थे।

4.1 संपत्ति पर स्त्री और पुरुष के भिन्न अधिकार

अब हम महाभारत के एक महत्वपूर्ण प्रकरण पर विचार करेंगे। कौरव और पांडव के बीच लंबे समय से चली आ रही प्रतिस्पर्धा के फलस्वरूप दुर्योधन ने युधिष्ठिर को द्यूत क्रीड़ा के लिए आमंत्रित किया। युधिष्ठिर अपने प्रतिद्वंद्वी द्वारा धोखा दिए जाने के कारण इस द्यूत में स्वर्ण, हस्ति, रथ, दास, सेना, कोष, राज्य तथा अपनी प्रजा की संपत्ति, अनुजों और फिर स्वयं को भी दाँव पर लगा कर गँवा बैठे। इसके उपरांत उन्होंने पांडवों की सहपत्नी द्रौपदी को भी दाँव पर लगाया और उसे भी हार गए।

संपत्ति के स्वामित्व के मुद्दे जो इन कहानियों में वर्णित हैं, धर्मसूत्र और धर्मशास्त्रों में भी उठाए गए हैं। *मनुस्मृति* के अनुसार पैतृक ज़ायदाद का माता–पिता की मृत्यु के बाद सभी पुत्रों में समान रूप से बँटवारा किया जाना चाहिए किंतु ज्येष्ठ पुत्र विशेष भाग का अधिकारी था। स्त्रियाँ इस पैतृक संसाधन में हिस्सेदारी की माँग नहीं कर सकती थीं।

किंतु विवाह के समय मिले उपहारों पर स्त्रियों का स्वामित्व माना जाता था और इसे *स्त्रीधन* (अर्थात् स्त्री का धन) की संज्ञा दी जाती थी। इस संपत्ति को उनकी संतान विरासत के रूप में प्राप्त कर सकती थी और इस पर उनके पति का कोई अधिकार नहीं होता था। किंतु *मनुस्मृति* स्त्रियों को पति की आज्ञा के विरुद्ध पारिवारिक संपत्ति अथवा स्वयं अपने बहुमूल्य धन के गुप्त संचय के विरुद्ध भी चेतावनी देती है।

आपने एक धनाढ्य वाकाटक महिषी प्रभावती गुप्त (अध्याय 2) के बारे में पढ़ा है। किंतु अधिकतर साक्ष्य–अभिलेखीय व साहित्यिक–इस बात की ओर इशारा करते हैं कि यद्यपि उच्च वर्ग की महिलाएँ संसाधनों पर अपनी पैठ रखती थीं, सामान्यतः भूमि, पशु और धन पर पुरुषों का ही नियंत्रण था। दूसरे शब्दों में, स्त्री और पुरुष के बीच सामाजिक हैसियत की भिन्नता संसाधनों पर उनके नियंत्रण की भिन्नता की वजह से अधिक प्रखर हुई।

स्रोत 11

द्रौपदी के प्रश्न

ऐसा माना जाता है कि द्रौपदी ने युधिष्ठिर से यह प्रश्न किया था कि वह उसे दाँव पर लगाने से पहले स्वयं को हार बैठे थे अथवा नहीं। इस प्रश्न के उत्तर में दो भिन्न मतों को प्रस्तुत किया गया।

प्रथम तो यह कि यदि युधिष्ठिर ने स्वयं को हार जाने के पश्चात द्रौपदी को दाँव पर लगाया तो यह अनुचित नहीं क्योंकि पत्नी पर पति का नियंत्रण सदैव रहता है।

दूसरा यह कि एक दासत्व स्वीकार करने वाला पुरुष (जैसे उस क्षण युधिष्ठिर थे) किसी और को दाँव पर नहीं लगा सकता।

इन मुद्दों का कोई निष्कर्ष नहीं निकला और अंततः धृतराष्ट्र ने सभी पांडवों और द्रौपदी को उनकी निजी स्वतंत्रता पुनः लौटा दी।

➲ क्या आपको ऐसा लगता है कि यह प्रकरण इस बात की ओर इंगित करता है कि पत्नियों को पतियों की निजी संपत्ति माना जाए?

स्रोत 12

स्त्री और पुरुष किस प्रकार संपत्ति अर्जित कर सकते थे?

पुरुषों के लिए *मनुस्मृति* कहती है कि धन अर्जित करने के सात तरीके हैं : विरासत, खोज, खरीद, विजित करके, निवेश, कार्य द्वारा तथा सज्जनों द्वारा दी गई भेंट को स्वीकार करके।

स्त्रियों के लिए संपत्ति अर्जन के छः तरीके हैं : वैवाहिक अग्नि के सामने तथा वधूगमन के समय मिली भेंट। स्नेह के प्रतीक के रूप में तथा भ्राता, माता और पिता द्वारा दिए गए उपहार। इसके अतिरिक्त परवर्ती काल में मिली भेंट तथा वह सब कुछ जो "अनुरागी" पति से उसे प्राप्त हो।

➲ स्त्री और पुरुष किस प्रकार धन प्राप्त कर सकते थे इसकी तुलना कीजिए व अंतर भी स्पष्ट कीजिए।

4.2 वर्ण और संपत्ति के अधिकार

ब्राह्मणीय ग्रंथों के अनुसार संपत्ति पर अधिकार का एक और आधार (लैंगिक आधार के अतिरिक्त) वर्ण था। जैसा हमने पहले पढ़ा है कि शूद्रों के लिए एकमात्र 'जीविका' ऐसी सेवा थी जिसमें हमेशा उनकी इच्छा शामिल नहीं होती थी। हालाँकि तीन उच्च वर्णों के पुरुषों के लिए विभिन्न जीविकाओं की संभावना रहती थी। यदि इन सब विधानों को वास्तव में कार्यान्वित किया जाता तो ब्राह्मण और क्षत्रिय सबसे धनी व्यक्ति होते। यह तथ्य कुछ हद तक सामाजिक वास्तविकता से मेल खाता था। साहित्यिक परंपरा में पुरोहितों और राजाओं का वर्णन मिलता है जिसमें राजा अधिकतर धनी चित्रित होते हैं; पुरोहित भी सामान्यत: धनी दर्शाए जाते हैं। हालाँकि यदा-कदा निर्धन ब्राह्मण का भी चित्रण मिलता है।

एक और स्तर पर, जहाँ समाज के ब्राह्मणीय दृष्टिकोण को धर्मसूत्र और धर्मशास्त्र में संहिताबद्ध किया जा रहा था अन्य परंपराओं ने वर्ण व्यवस्था की आलोचना प्रस्तुत की। इनमें से सर्वविदित आलोचनाएँ प्रारंभिक बौद्ध धर्म में (लगभग छठी शताब्दी ई.पू. से, अध्याय 4) विकसित हुईं। बौद्धों ने इस बात को अंगीकार किया कि समाज में विषमता मौजूद थी किंतु यह भेद न तो नैसर्गिक थे और न ही स्थायी। बौद्धों ने जन्म के आधार पर सामाजिक प्रतिष्ठा को अस्वीकार किया।

स्रोत 13

एक धनाढ्य शूद्र

यह कहानी पालि भाषा के बौद्ध ग्रंथ *मज्झिमनिकाय* से है जो एक राजा अवन्तिपुत्र और बुद्ध के अनुयायी कच्चन के बीच हुए संवाद का हिस्सा है। यद्यपि यह कहानी अक्षरशः सत्य नहीं थी तथापि यह बौद्धों के वर्ण संबंधी रवैये को दर्शाती है।

अवन्तिपुत्र ने कच्चन से पूछा कि ब्राह्मणों के इस मत के बारे में उनकी क्या राय है, कि वे सर्वश्रेष्ठ हैं और अन्य जातियाँ निम्न कोटि की हैं; ब्राह्मण का वर्ण शुभ्र है और अन्य जातियाँ काली हैं; केवल ब्राह्मण पवित्र हैं अन्य नहीं; ब्राह्मण ब्रह्मा के पुत्र हैं, ब्रह्मा के मुख से जन्मे हैं, उनसे ही रचित हैं तथा ब्रह्मा के वंशज हैं।

कच्चन ने उत्तर दिया: "क्या यदि शूद्र धनी होता... दूसरा शूद्र... अथवा क्षत्रिय या फिर ब्राह्मण अथवा वैश्य... उससे विनीत स्वर में बात करता?"

अवन्तिपुत्र ने प्रत्युत्तर में कहा कि यदि शूद्र के पास धन अथवा अनाज, स्वर्ण या फिर रजत होती वह दूसरे शूद्र को अपने आज्ञाकारी सेवक के रूप में प्राप्त कर सकता था, जो उससे पहले उठे और उसके बाद विश्राम करे; जो उसकी आज्ञा का पालन करे, विनीत वचन बोले; अथवा वह क्षत्रिय, ब्राह्मण या फिर वैश्य को भी आज्ञावाही सेवक बना सकता था।

कच्चन ने पूछा, "यदि ऐसा है, तो क्या फिर यह चारों वर्ण एकदम समान नहीं हैं?"

अवन्तिपुत्र ने यह स्वीकार किया कि इस आधार पर चारों वर्णों में कोई भेद नहीं है।

➲ अवन्तिपुत्र के पहले वक्तव्य को दुबारा पढ़िए। इसमें कौन से विचार ऐसे हैं जो ब्राह्मणीय ग्रंथों/ परंपराओं से लिए गए हैं? क्या आप इनमें से किसी विचार के स्रोत की पहचान कर सकते हैं? इस ग्रंथ के अनुसार सामाजिक असमानता के लिए क्या स्पष्टीकरण दिया जा सकता है?

4.3 एक वैकल्पिक सामाजिक रूपरेखा : संपत्ति में भागीदारी

अभी तक हम उन परिस्थितियों का परीक्षण करते रहे हैं जहाँ लोग अपनी संपत्ति के आधार पर सामाजिक प्रतिष्ठा का दावा करते थे, या फिर उन्हें वह स्थिति प्रदान की जाती थी। किंतु समाज में अन्य संभावनाएँ भी थीं। वह स्थिति जहाँ दानशील आदमी का सम्मान किया जाता था तथा कृपण व्यक्ति अथवा वह जो स्वयं अपने लिए संपत्ति संग्रह करता था, घृणा का पात्र होता था। प्राचीन तमिलकम् एक ऐसा ही क्षेत्र था जहाँ उपरोक्त आदर्शों को संजोया जाता था। जैसा हमने पहले पढ़ा (अध्याय 2), इस क्षेत्र में 2000 वर्ष पहले अनेक सरदारियाँ थीं। यह सरदार अपनी प्रशंसा गाने वाले चारण और कवियों के आश्रयदाता होते थे। तमिल भाषा के संगम साहित्यिक संग्रह में सामाजिक और आर्थिक संबंधों का अच्छा चित्रण है जो इस ओर इंगित करता है कि हालाँकि

धनी और निर्धन के बीच विषमताएँ थीं, जिन लोगों का संसाधनों पर नियंत्रण था उनसे यह अपेक्षा की जाती थी कि वे मिल-बाँट कर उसका उपयोग करेंगे।

स्रोत 14

निर्धन दानी सरदार

यह रचना *पुरुनारुरू* से उद्धृत है जो तमिल संगम साहित्य (लगभग प्रथम शताब्दी ईसवी) की एक पद्यावली है। इस रचना में एक चारण अपने आश्रयदाता का चित्रण अन्य कवियों के समक्ष इस भाँति कर रहा है :

उसके (अर्थात् आश्रयदाता) पास हर रोज़ दूसरों पर खर्चा करने के लिए धन नहीं है।

किंतु वह इतना ओछा भी नहीं है कि यह कहकर, कि मेरे पास कुछ नहीं है, दान देने से मना कर दे!...

वह इरंतई (एक स्थान) में रहता है और दानप्रिय है। वह चारणों की क्षुधा का शत्रु है।

यदि तुम अपनी गरीबी को समाप्त करना चाहो तो मेरे साथ आओ, तुम सभी चारण जिनके होंठ इतने दक्ष हैं!

यदि हम उससे प्रार्थना करेंगे और अपनी भूख से क्षीण हुई पसलियाँ उसे दिखाएँगे, तो वह अपने गाँव के लोहार के पास जाएगा और उस सक्षम हाथ वाले से कहेगा: "मुझे युद्ध के लिए एक लंबा भाला तैयार कर दो, एक ऐसा भाला जिसका सीधा फलक हो!"

➲ चारण ने सरदार को दानी बताने के लिए किस तरह के दाँव-पेंच अपनाए?
धन अर्जित करने के लिए सरदार को क्या करना होता था जिससे वह उसका कुछ अंश चारण को दे सके?

चित्र 3.7
एक सरदार और उसका अनुयायी; पत्थर की मूर्ति, अमरावती (आंध्र प्रदेश) लगभग दूसरी शताब्दी ईसवी

➲ मूर्तिकार ने सरदार व उसके अनुयायी के बीच अंतर को कैसे दर्शाया है?

➲ चर्चा कीजिए...

वर्तमान समाजों में सामाजिक रिश्ते किस तरह परिचालित होते हैं? क्या यह अतीत के सामाजिक रिश्तों से मिलते-जुलते हैं, अथवा भिन्न हैं?

5. सामाजिक विषमताओं की व्याख्या

एक सामाजिक अनुबंध

बौद्धों ने समाज में फैली विषमताओं के संदर्भ में एक अलग अवधारणा प्रस्तुत की। साथ ही समाज में फैले अंतर्विरोधों को नियमित करने के लिए जिन संस्थानों की आवश्यकता थी, उस पर भी अपना दृष्टिकोण सामने रखा। *सुत्तपिटक* नामक ग्रंथ में एक मिथक वर्णित है जो यह बताता है कि प्रारंभ में मानव पूर्णतया विकसित नहीं थे। वनस्पति जगत भी अविकसित था। सभी जीव शांति के एक निर्बाध लोक में रहते थे और प्रकृति से उतना ही ग्रहण करते थे जितनी एक समय के भोजन की आवश्यकता होती है।

किंतु यह व्यवस्था क्रमशः पतनशील हुई। मनुष्य अधिकाधिक लालची, प्रतिहिंसक और कपटी हो गए। इस स्थिति में उन्होंने विचार किया कि: "क्या हम एक ऐसे मनुष्य का चयन करें जो उचित बात पर क्रोधित हो, जिसकी प्रताड़ना की जानी चाहिए उसको प्रताड़ित करे और जिसे निष्कासित किया जाना हो उसे निष्कासित करे? बदले में हम उसे चावल का अंश देंगे... सब लोगों द्वारा चुने जाने के कारण उसे *महासम्मत्त* की उपाधि प्राप्त होगी।"

इससे यह ज्ञात होता है कि राजा का पद लोगों द्वारा चुने जाने पर निर्भर करता था। 'कर' वह मूल्य था जो लोग राजा की इस सेवा के बदले उसे देते थे। यह मिथक इस बात को भी दर्शाता है कि आर्थिक और सामाजिक संबंधों को बनाने में मानवीय कर्म का बड़ा हाथ था। इसके कुछ और आशय भी हैं। उदाहरणतः यदि मनुष्य स्वयं एक प्रणाली को बनाए रखने के लिए ज़िम्मेदार थे तो भविष्य में उसमें परिवर्तन भी ला सकते थे।

6. साहित्यिक स्रोतों का इस्तेमाल

इतिहासकार और महाभारत

यदि आप इस अध्याय के स्रोतों की ओर गौर करें तो आप पाएँगे कि इतिहासकार किसी ग्रंथ का विश्लेषण करते समय अनेक पहलुओं पर विचार करते हैं तथा इस बात का परीक्षण करते हैं कि ग्रंथ किस *भाषा* में लिखा गया : पालि, प्राकृत अथवा तमिल, जो आम लोगों द्वारा बोली जाती थी अथवा संस्कृत जो विशिष्ट रूप से पुरोहितों और खास वर्ग द्वारा प्रयोग में लाई जाती थी। इतिहासकार ग्रंथ के *प्रकार* पर भी ध्यान देते हैं। क्या यह ग्रंथ 'मंत्र' थे जो अनुष्ठानकर्ताओं द्वारा पढ़े और उच्चरित किए जाते थे अथवा ये 'कथा' ग्रंथ थे जिन्हें लोग पढ़ और सुन सकते थे तथा दिलचस्प होने पर जिन्हें दुबारा सुनाया जा सकता था? इसके अलावा

इतिहासकार लेखक(कों) के बारे में भी जानने का प्रयास करते हैं जिनके दृष्टिकोण और विचारों ने ग्रंथों को रूप दिया। इन ग्रंथों के श्रोताओं का भी इतिहासकार परीक्षण करते हैं क्योंकि लेखकों ने अपनी रचना करते समय श्रोताओं की अभिरुचि पर ध्यान दिया होगा। इतिहासकार ग्रंथ के संभावित संकलन/रचना काल और उसकी रचनाभूमि का भी विश्लेषण करते हैं। इन सब मुद्दों का जायज़ा लेने के बाद ही इतिहासकार किसी भी ग्रंथ की विषयवस्तु का इतिहास के पुनर्निर्माण के लिए इस्तेमाल करते हैं। महाभारत जैसे विशाल और जटिल ग्रंथ के संदर्भ में, आप कल्पना कर सकते हैं कि यह कार्य कितना कठिन होगा।

6.1 भाषा एवं विषयवस्तु

अब हम ग्रंथ की भाषा की ओर देखते हैं। महाभारत का जो पाठ हम इस्तेमाल कर रहे हैं वह संस्कृत में है (यद्यपि अन्य भाषाओं में भी इसके संस्करण मिलते हैं)। किंतु महाभारत में प्रयुक्त संस्कृत वेदों अथवा प्रशस्तियों (अध्याय 2 में चर्चित) की संस्कृत से कहीं अधिक सरल है। अतः यह संभव है कि इस ग्रंथ को व्यापक स्तर पर समझा जाता था।

इतिहासकार इस ग्रंथ की विषयवस्तु को दो मुख्य शीर्षकों–*आख्यान* तथा *उपदेशात्मक*–के अंतर्गत रखते हैं। आख्यान में कहानियों का संग्रह है और उपदेशात्मक भाग में सामाजिक आचार-विचार के मानदंडों का चित्रण है। किंतु यह विभाजन पूरी तरह अपने में एकांकी नहीं है–उपदेशात्मक अंशों में भी कहानियाँ होती हैं और बहुधा आख्यानों में समाज के लिए एक सबक निहित रहता है। अधिकतर इतिहासकार इस बात पर एकमत हैं कि महाभारत वस्तुतः एक भाग में नाटकीय कथानक था जिसमें उपदेशात्मक अंश बाद में जोड़े गए।

उपदेशात्मक शब्द का तात्पर्य है निर्देश अथवा शिक्षा देना।

चित्र 3.8
श्रीकृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हुए
महाभारत का सबसे महत्वपूर्ण उपदेशात्मक अंश *भगवद्गीता* है जहाँ कुरुक्षेत्र की युद्धभूमि में श्रीकृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हैं। इस दृश्य को चित्रों और मूर्तिकला में कई बार दर्शाया गया है। इस चित्र का काल अठारहवीं शताब्दी है।

आरंभिक संस्कृत परंपरा में महाभारत को 'इतिहास' की श्रेणी में रखा गया है। इस शब्द का अर्थ है : 'ऐसा ही था।' क्या महाभारत में, सचमुच में हुए किसी युद्ध का स्मरण किया जा रहा था? इस बारे में हम निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकते। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि स्वजनों के बीच हुए युद्ध की स्मृति ही महाभारत का मुख्य कथानक है। अन्य इस बात की ओर इंगित करते हैं कि हमें युद्ध की पुष्टि किसी और साक्ष्य से नहीं होती।

6.2 लेखक (एक या कई) और तिथियाँ

यह ग्रंथ किसने लिखा? इस प्रश्न के कई उत्तर हैं। संभवतः मूल कथा के रचयिता भाट सारथी थे जिन्हें 'सूत' कहा जाता था। ये क्षत्रिय योद्धाओं के साथ युद्धक्षेत्र में जाते थे और उनकी विजय व उपलब्धियों के बारे में कविताएँ लिखते थे। इन रचनाओं का प्रेषण मौखिक रूप में हुआ। पाँचवीं शताब्दी ई.पू. से ब्राह्मणों ने इस कथा परंपरा पर अपना अधिकार कर लिया और इसे लिखा। यह वह काल था जब कुरु और पांचाल जिनके इर्द-गिर्द महाभारत की कथा घूमती है, मात्र सरदारी से राजतंत्र के रूप में उभर रहे थे। क्या नए राजा अपने इतिहास को अधिक

चित्र 3.9
लिपिक श्रीगणेश
परंपरा के अनुसार व्यास ने इस ग्रंथ को श्रीगणेश को लिखवाया। यह चित्र महाभारत के फारसी अनुवाद (लगभग 1740-50) से लिया गया है।
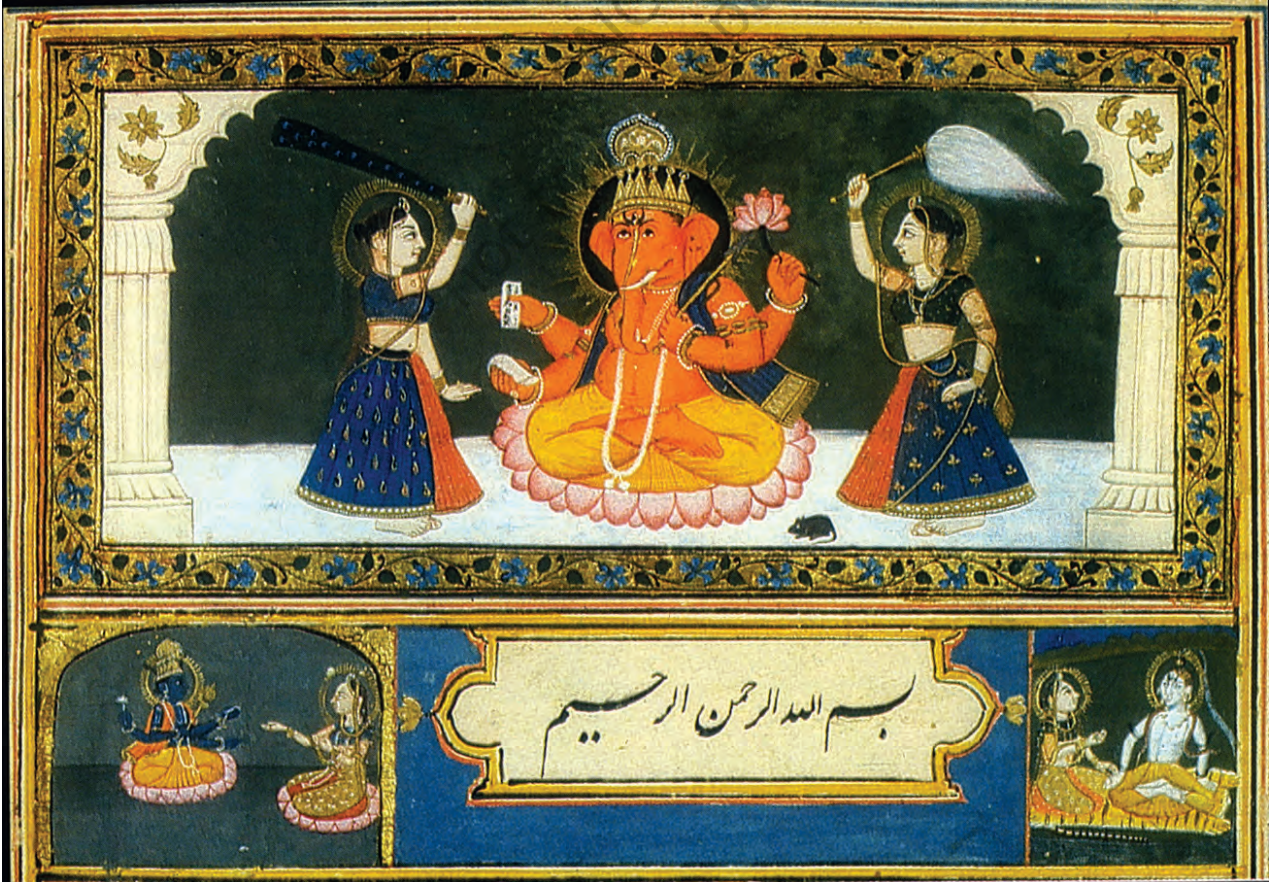
नियमित रूप से लिखना चाहते थे? यह भी संभव है कि नए राज्यों की स्थापना के समय होने वाली उथल-पुथल के कारण पुराने सामाजिक मूल्यों के स्थान पर नवीन मानदंडों की स्थापना हुई जिनका इस कहानी के कुछ भागों में वर्णन मिलता है।

लगभग 200 ई.पू. से 200 ईसवी के बीच हम इस ग्रंथ के रचनाकाल का एक और चरण देखते हैं। यह वह समय था जब विष्णु देवता की आराधना प्रभावी हो रही थी, तथा श्रीकृष्ण को जो इस महाकाव्य के महत्वपूर्ण नायकों में से हैं, उन्हें विष्णु का रूप बताया जा रहा था। कालांतर में लगभग 200-400 ईसवी के बीच *मनुस्मृति* से मिलते-जुलते बृहत उपदेशात्मक प्रकरण महाभारत में जोड़े गए। इन सब परिवर्धनों के कारण यह ग्रंथ जो अपने प्रारंभिक रूप में संभवतः 10,000 श्लोकों से भी कम रहा होगा, बढ़ कर एक लाख श्लोकों वाला हो गया। साहित्यिक परंपरा में इस बृहत रचना के रचयिता ऋषि व्यास माने जाते हैं।

6.3 सदृशता की खोज

महाभारत में अन्य किसी भी प्रमुख महाकाव्य की भाँति युद्धों, वनों, राजमहलों और बस्तियों का अत्यंत जीवंत चित्रण है। 1951-52 में पुरातत्ववेत्ता बी.बी. लाल ने मेरठ ज़िले (उ.प्र.) के हस्तिनापुर नामक एक गाँव में उत्खनन किया। क्या यह गाँव महाकाव्य में वर्णित हस्तिनापुर था? हालाँकि नामों की समानता मात्र एक संयोग हो सकता है किंतु गंगा के ऊपरी दोआब वाले क्षेत्र में इस पुरास्थल का होना जहाँ कुरु राज्य भी स्थित था, इस ओर इंगित करता है कि यह पुरास्थल कुरुओं की राजधानी हस्तिनापुर हो सकती थी जिसका उल्लेख महाभारत में आता है।

बी.बी. लाल को यहाँ आबादी के पाँच स्तरों के साक्ष्य मिले थे जिनमें से दूसरा और तीसरा स्तर हमारे विश्लेषण के लिए महत्वपूर्ण है। दूसरे स्तर (लगभग बारहवीं से सातवीं शताब्दी ई.पू.) पर मिलने वाले घरों के बारे में लाल कहते हैं : "जिस सीमित क्षेत्र का उत्खनन हुआ वहाँ से आवास गृहों की कोई निश्चित परियोजना नहीं मिलती किंतु मिट्टी की बनी दीवारें और कच्ची मिट्टी की ईंटें अवश्य मिलती हैं। सरकंडे की छाप वाले मिट्टी के पलस्तर की खोज इस बात की ओर इशारा करती है कि कुछ घरों की दीवारें सरकंडों की बनी थीं जिन पर मिट्टी का पलस्तर चढ़ा दिया जाता था।" तीसरे स्तर (लगभग छठी से तीसरी शताब्दी ई.पू.) के लिए लाल कहते हैं: "तृतीय काल के घर कच्ची और कुछ पक्की ईंटों के बने हुए थे। इनमें शोषक-घट और ईंटों के नाले गंदे पानी के निकास के लिए इस्तेमाल किए जाते थे, तथा वलय-कूपों का इस्तेमाल, कुओं और मल की निकासी वाले गर्तों, दोनों ही रूपों में किया जाता था।"

स्रोत 15

हस्तिनापुर

महाभारत के *आदिपर्वन्* में इस नगर का चित्रण इस प्रकार मिलता है :

> यह नगर जो समुद्र की भाँति भरा हुआ था, जो सैकड़ों प्रासादों से संकुलित था। इसके सिंहद्वार, तोरण और कंगूरे सघन बादलों की तरह घुमड़ रहे थे। यह इंद्र की नगरी के समान शोभायमान था।

➲ क्या आपको लगता है कि लाल की खोज और महाकाव्य में वर्णित हस्तिनापुर में समानता है।

चित्र 3.10
हस्तिनापुर में उत्खनित एक दीवार का अंश
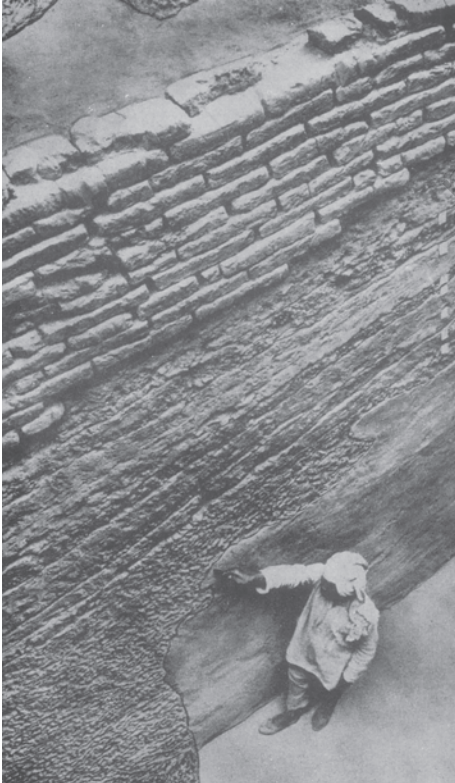
क्या नगर का यह चित्रण महाकाव्य के मुख्य कथानक में बाद में (ईसा पूर्व छठी शताब्दी के पश्चात) जोड़ दिया गया जब इस क्षेत्र में नगरों का विकास हुआ? अथवा यह मात्र कवियों की कल्पना की उड़ान थी जिसकी अन्य किसी भी साक्ष्य के साथ तुलना कर उसे प्रमाणित नहीं किया जा सकता।

एक और उदाहरण पर गौर कीजिए। महाभारत की सबसे चुनौतीपूर्ण उपकथा द्रौपदी से पांडवों के विवाह की है। यह बहुपति विवाह का उदाहरण है जो महाभारत की कथा का अभिन्न अंग है। यदि हम महाकाव्य के इस अंश का विश्लेषण करें तो यह विदित होता है कि लेखक(कों) ने विभिन्न तरीकों से इसका स्पष्टीकरण देने का प्रयास किया है।

स्रोत 16

द्रौपदी का विवाह

पांचाल नरेश द्रुपद ने एक स्वयंवर का आयोजन किया जिसमें यह शर्त रखी गई कि धनुष की चाप चढ़ा कर निशाने पर तीर मारा जाए; विजेता उनकी पुत्री द्रौपदी से विवाह करने के लिए चुना जाएगा। अर्जुन ने यह प्रतियोगिता जीती और द्रौपदी ने उसे वरमाला पहनाई। पांडव उसे लेकर अपनी माता कुंती के पास गए जिन्होंने बिना देखे ही उन्हें लाई गई वस्तु को आपस में बाँट लेने को कहा। जब कुंती ने द्रौपदी को देखा तो उन्हें अपनी भूल का एहसास हुआ, किंतु उनकी आज्ञा की अवहेलना नहीं की जा सकती थी। बहुत सोच-विचार के बाद युधिष्ठिर ने यह निर्णय लिया कि द्रौपदी उन पाँचों की पत्नी होगी।

जब द्रुपद को यह बताया गया तो उन्होंने इसका विरोध किया। किंतु ऋषि व्यास ने उन्हें इस तथ्य से अवगत कराया कि पांडव वास्तव में इंद्र के अवतार थे और उनकी पत्नी ने ही द्रौपदी के रूप में जन्म लिया था। अतः नियति ने ही उन सबका साथ निश्चित कर दिया था।

व्यास ने यह भी बताया कि एक बार युवा स्त्री ने पति प्राप्ति के लिए शिव की आराधना की और उत्साह के अतिरेक में एक के बजाय पाँच बार पति प्राप्ति का वर माँग लिया। इसी स्त्री ने द्रौपदी के रूप में जन्म लिया तथा शिव ने उसकी प्रार्थना को परिपूर्ण किया है। इन कहानियों से संतुष्ट होकर द्रुपद ने इस विवाह को अपनी सहमति प्रदान की।

➲ आपको क्यों लगता है कि लेखक(कों) ने एक ही प्रकरण के लिए तीन स्पष्टीकरण प्रस्तुत किए?

वर्तमान इतिहासकारों का यह सुझाव है कि लेखक(कों) द्वारा बहुपति विवाह संबंध का चित्रण इस बात की ओर इंगित करता है कि संभवतः यह प्रथा शासकों के विशिष्ट वर्ग में किसी काल में मौजूद थी। किंतु साथ ही इस प्रकरण के विभिन्न स्पष्टीकरण इस बात को भी व्यंजित करते हैं कि समय के साथ बहुपति प्रथा उन ब्राह्मणों में अमान्य हो गई जिन्होंने कई शताब्दियों के दौरान इस ग्रंथ को पुनर्निर्मित किया।

कुछ इतिहासकार इस तथ्य की ओर भी ध्यान दिलाते हैं कि यद्यपि ब्राह्मणों की दृष्टि में बहुपति प्रथा अमान्य और अवांछित थी, यह हिमालय क्षेत्र में प्रचलन में थी (और आज भी है)। यह भी कहा जाता है कि युद्ध के समय स्त्रियों की कमी के कारण बहुपति प्रथा को अपनाया गया। दूसरे शब्दों में कहें तो संकट की स्थिति में इसे अपनाया गया।

कुछ आरंभिक स्रोत इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि बहुपति प्रथा न तो एकमात्र विवाह पद्धति थी और न ही यह सबसे अधिक प्रचलित थी। फिर क्यों इस ग्रंथ के रचनाकार(रों) ने इस प्रथा को महाभारत के प्रमुख पात्रों के साथ अभिन्न रूप से जोड़कर देखा? हमें यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि सृजनात्मक साहित्य की अपनी कथा संबंधी ज़रूरतें होती हैं जो हमेशा समाज में मौजूद वास्तविकताओं को नहीं दर्शातीं।

7. एक गतिशील ग्रंथ

महाभारत का विकास संस्कृत के पाठ के साथ ही समाप्त नहीं हो गया। शताब्दियों से इस महाकाव्य के अनेक पाठान्तर भिन्न-भिन्न भाषाओं में लिखे गए। ये सब उस संवाद को दर्शाते थे जो इनके लेखकों, अन्य लोगों और समुदायों के बीच कायम हुए। अनेक कहानियाँ जिनका उद्भव एक क्षेत्र विशेष में हुआ और जिनका खास लोगों के बीच प्रसार हुआ, वे सब इस महाकाव्य में समाहित कर ली गईं। साथ ही इस महाकाव्य की मुख्य कथा की अनेक पुनर्व्याख्याएँ की गईं। इसके प्रसंगों को मूर्तिकला और चित्रों में भी दर्शाया गया। इस महाकाव्य ने नाटकों और नृत्य कलाओं के लिए भी विषय-वस्तु प्रदान की।

इस महाकाव्य की पुनर्व्याख्याओं में मुख्य कथावस्तु को बहुत ही सृजनात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। हम ऐसे ही एक उदाहरण का उल्लेख करते हैं। महाभारत के एक प्रसंग का रूपांतरण समसामयिक बांग्ला लेखिका महाश्वेता देवी ने किया है, जो शोषण के विरुद्ध अपनी आवाज़ उठाने के लिए प्रसिद्ध हैं। इस उदाहरण में उन्होंने महाभारत की

➲ चर्चा कीजिए...

इस अध्याय में महाभारत से उद्धृत अंशों को एक बार फिर पढ़िए। इनमें से प्रत्येक के विषय में यह चर्चा कीजिए कि क्या वे वास्तव में सत्य थे। ये उद्धरण हमें महाकाव्य के रचयिताओं, पाठकों या फिर श्रोताओं के विषय में क्या बताते हैं?

मुख्य कथावस्तु के लिए अन्य विकल्प खोजे हैं और उन प्रश्नों की ओर ध्यान खींचा है जिन पर संस्कृत पाठ पूर्णतया मूक है।

संस्कृत पाठ में दुर्योधन द्वारा पांडवों को छल से लाक्षागृह में जलाकर मार देने का उल्लेख आता है। किंतु पहले से मिली चेतावनी के कारण पांडव उस गृह में सुरंग खोदकर भाग निकलते हैं। उस समय कुंती एक भोज का आयोजन करती है जिसमें ब्राह्मण आमंत्रित होते हैं, किंतु एक निषादी भी अपने पाँच पुत्रों के साथ उसमें आती है। खा-पीकर वे गहरी नींद में सो जाते हैं और पांडवों द्वारा लगाई गई आग में वे उसी लाक्षागृह में भस्म हो जाते हैं। जब उस निषादी और उसके पुत्रों के जले शव मिलते हैं तो लोग यह सोचते हैं कि पांडवों की मृत्यु हो गई है।

अपनी लघु कथा जिसका शीर्षक "कुंती ओ निषादी" है, महाश्वेता देवी ने कथानक का प्रारंभ वहाँ से किया है जहाँ महाभारत के इस प्रसंग का अंत होता है। उन्होंने अपनी कहानी का संयोजन एक वनप्रांतर में किया है जहाँ महाभारत के युद्ध के बाद कुंती रहने लगती हैं। कुंती के पास अब अपने अतीत के विषय में सोचने का समय है। पृथ्वी जो प्रकृति की प्रतीक है उससे बातें करते हुए वह अपनी त्रुटियों को अंगीकार करती हैं। प्रतिदिन वह निषादों को देखती हैं जो वन में लकड़ी, शहद, कंदमूल आदि एकत्रित करने आते हैं। एक निषादी बहुधा कुंती को पृथ्वी से बात करते हुए सुनती है।

एक दिन वातावरण में कुछ था; जानवर जंगल छोड़कर भाग रहे थे। कुंती ने देखा कि निषादी उन्हें ताक रही है, जब उसने यह पूछा कि क्या उन्हें लाक्षागृह की याद है, तो कुंती सकपका गई। उन्हें याद था। क्या उन्हें एक वृद्धा निषादी और उसके पाँच पुत्र याद थे? और इसकी स्मृति थी कि कुंती ने उन्हें मदिरा पिलाई थी, इतनी कि वे सब बेसुध हो गए थे जबकि वह स्वयं अपने पुत्रों के संग बचकर निकल गई थीं। कुंती ने पूछा क्या तुम वह निषादी हो? उसने उत्तर दिया कि मरी हुई निषादी उसकी सास थी। साथ ही वह बोली कि अपने अतीत पर विचार करते समय तुम्हें एक बार भी उन छः निर्दोष लोगों की याद नहीं आई जिन्हें प्राणों से हाथ धोना पड़ा था, क्योंकि तुम अपनी और अपने पुत्रों की जान बचाना चाहती थीं। जिस समय वे दोनों बातें कर रही थीं आग की लपटें करीब आ रही थीं। निषादी तो अपने प्राण बचाकर निकल गई किन्तु कुंती जहाँ खड़ी थी वहीं रह गई।

कालरेखा 1
प्रमुख साहित्यिक परंपराएँ

लगभग 500 ई. पू.	पाणिनि की *अष्टाध्यायी*, संस्कृत व्याकरण
लगभग 500-200 ई. पू.	प्रमुख धर्मसूत्र (संस्कृत में)
लगभग 500-100 ई. पू.	आरंभिक बौद्ध ग्रंथ *त्रिपिटक* सहित (पालि में)
लगभग 500 ई. पू.-400 ईसवी	*रामायण* और *महाभारत* (संस्कृत में)
लगभग 200 ई. पू.-200 ईसवी	*मनुस्मृति* (संस्कृत में), तमिल संगम साहित्य की रचना और संकलन
लगभग 100 ईसवी	*चरक* और *सुश्रुत* संहिता, आयुर्वेद के ग्रंथ (संस्कृत में)
लगभग 200 ईसवी से	*पुराणों* का संकलन (संस्कृत में)
लगभग 300 ईसवी	भरतमुनि का *नाट्यशास्त्र* (संस्कृत में)
लगभग 300-600 ईसवी	अन्य धर्मशास्त्र (संस्कृत में)
लगभग 400-500 ईसवी	संस्कृत नाटक कालिदास के साहित्य सहित; खगोल व गणित शास्त्र पर आर्यभट्ट और वराहमिहिर के ग्रंथ (संस्कृत में); जैन ग्रंथों का संग्रहण (प्राकृत में)

कालरेखा 2
महाभारत के अध्ययन में प्रमुख कीर्तिमान

बीसवीं शताब्दी

1919-66	महाभारत के समालोचनात्मक संस्करण की परिकल्पना और प्रकाशन
1973	जे.ए.बी. वैन बियुटेनेन द्वारा समालोचनात्मक संस्करण का अंग्रेज़ी अनुवाद आरंभ; 1978 में उनकी मृत्यु के बाद यह परियोजना अधूरी रह गई।

उत्तर दीजिए (लगभग 100-150 शब्दों में)

1. स्पष्ट कीजिए कि विशिष्ट परिवारों में पितृवंशिकता क्यों महत्वपूर्ण रही होगी?

2. क्या आरंभिक राज्यों में शासक निश्चित रूप से क्षत्रिय ही होते थे? चर्चा कीजिए।

3. द्रोण, हिडिम्बा और मातंग की कथाओं में धर्म के मानदंडों की तुलना कीजिए व उनके अंतर को भी स्पष्ट कीजिए।

4. किन मायनों में सामाजिक अनुबंध की बौद्ध अवधारणा समाज के उस ब्राह्मणीय दृष्टिकोण से भिन्न थी जो 'पुरुषसूक्त' पर आधारित था।

5. निम्नलिखित अवतरण महाभारत से है जिसमें ज्येष्ठ पांडव युधिष्ठिर दूत संजय को संबोधित कर रहे हैं :

   > संजय धृतराष्ट्र गृह के सभी ब्राह्मणों और मुख्य पुरोहित को मेरा विनीत अभिवादन दीजिएगा। मैं गुरु द्रोण के सामने नतमस्तक होता हूँ... मैं कृपाचार्य के चरण स्पर्श करता हूँ... (और) कुरु वंश के प्रधान भीष्म के। मैं वृद्ध राजा (धृतराष्ट्र) को नमन करता हूँ। मैं उनके पुत्र दुर्योधन और उनके अनुजों के स्वास्थ्य के बारे में पूछता हूँ तथा उनको शुभकामनाएँ देता हूँ... मैं उन सब युवा कुरु योद्धाओं का अभिनंदन करता हूँ जो हमारे भाई, पुत्र और पौत्र हैं... सर्वोपरि मैं उन महामति विदुर को (जिनका जन्म दासी से हुआ है) नमस्कार करता हूँ जो हमारे पिता और माता के सदृश हैं... मैं उन सभी वृद्धा स्त्रियों को प्रणाम करता हूँ जो हमारी माताओं के रूप में जानी जाती हैं। जो हमारी पत्नियाँ हैं उनसे यह कहिएगा कि, "मैं आशा करता हूँ कि वे सुरक्षित हैं"... मेरी ओर से उन कुलवधुओं का जो उत्तम परिवारों में जन्मी हैं और बच्चों की माताएँ हैं, अभिनंदन कीजिएगा तथा हमारी पुत्रियों का आलिंगन कीजिएगा... सुंदर, सुगंधित, सुवेशित गणिकाओं को शुभकामनाएँ दीजिएगा। दासियों और उनकी संतानों तथा वृद्ध, विकलांग और असहाय जनों को भी मेरी ओर से नमस्कार कीजिएगा...

   इस सूची को बनाने के आधारों की पहचान कीजिए – उम्र, लिंग, भेद व बंधुत्व के संदर्भ में। क्या कोई अन्य आधार भी हैं? प्रत्येक श्रेणी के लिए स्पष्ट कीजिए कि सूची में उन्हें एक विशेष स्थान पर क्यों रखा गया है?

निम्नलिखित पर एक लघु निबंध लिखिए (लगभग 500 शब्दों में)

6. भारतीय साहित्य के प्रसिद्ध इतिहासकार मौरिस विंटरविट्ज़ ने महाभारत के बारे में लिखा था कि: "चूँकि महाभारत संपूर्ण साहित्य का प्रतिनिधित्व करता है... बहुत सारी और अनेक प्रकार की चीज़ें इसमें निहित हैं... (वह) भारतीयों की आत्मा की अगाध गहराई को एक अंतर्दृष्टि प्रदान करता है।" चर्चा कीजिए।

7. क्या यह संभव है कि महाभारत का एक ही रचयिता था? चर्चा कीजिए।

8. आरंभिक समाज में स्त्री-पुरुष के संबंधों की विषमताएँ कितनी महत्वपूर्ण रही होंगी? कारण सहित उत्तर दीजिए।

9. उन साक्ष्यों की चर्चा कीजिए जो यह दर्शाते हैं कि बंधुत्व और विवाह संबंधी ब्राह्मणीय नियमों का सर्वत्र अनुसरण नहीं होता था।

मानचित्र कार्य

10. इस अध्याय के मानचित्र की अध्याय 2 के मानचित्र 1 से तुलना कीजिए। कुरु-पांचाल क्षेत्र के पास स्थित महाजनपदों और नगरों की सूची बनाइए।

परियोजना कार्य (कोई एक)

11. अन्य भाषाओं में महाभारत की पुनर्व्याख्या के बारे में जानिए। इस अध्याय में वर्णित महाभारत के किन्हीं दो प्रसंगों का इन भिन्न भाषा वाले ग्रंथों में किस तरह निरूपण हुआ है उनकी चर्चा कीजिए। जो भी समानता और विभिन्नता आप इन वृत्तांत में देखते हैं उन्हें स्पष्ट कीजिए।

12. कल्पना कीजिए कि आप एक लेखक हैं और एकलव्य की कथा को अपने दृष्टिकोण से लिखिए।

यदि आप और जानकारी चाहते हैं तो इन्हें पढ़िए :

उमा चक्रवर्ती, 2006
एवरीडे लाइव्ज़, एवरीडे हिस्ट्रीज़,
तूलिका, नयी दिल्ली।

इरावती कार्वे, 1968
किनशिप आर्गनाईज़ेशन इन इंडिया,
एशिया पब्लिशिंग हाउस, बॉम्बे।

आर.एस. शर्मा, 1983
पर्सपेक्टिव इन सोशल एंड इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ़ अर्ली इंडिया,
मुंशीराम मनोहर लाल, नयी दिल्ली।

वी.एस. सुकथांकर, 1957
ऑन द मीनिंग ऑफ़ द महाभारत,
एशियाटिक सोसायटी ऑफ़ बॉम्बे, बॉम्बे।

रोमिला थापर, 2000
कल्चरल पास्ट्स: ऐसेज़ इन अर्ली इंडियन हिस्ट्री, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली।

अधिक जानकारी के लिए आप निम्नलिखित वेबसाइट देख सकते हैं
http://bombay.indology.info/mahabharata/statement.html